श्री अरिष्ट नेमि तीर्थंकर विधान

रचयित्री
गणिनीप्रमुख आर्यिका ज्ञानमती

वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला का पुष्प नं. 471
ISBN-978-93-84003-82-1

श्री अरिष्ट नेमितीर्थंकर विधान

–रचयित्री –

परमपूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि
श्री ज्ञानमती माताजी

108 फुट विशालकाय भगवान ऋषभदेव अंतराष्ट्रीय पंचकल्याणक प्रतिष्ठा
एवं महामस्तकाभिषेक महोत्सव के लिए मांगीतुंगी सिद्धक्षेत्र पधारीं
पूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि श्री ज्ञानमती माताजी के 82वें जन्मदिवस
आश्विन शुक्ला पूर्णिमा (27 अक्टूबर 2015) के शुभ अवसर पर प्रकाशित

-प्रकाशक-

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान
जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर (मेरठ) उ.प्र.फोन नं.- (01233) 280184, 280994
Website : www.jambudweep.org www.encyclopediaofjainism.com
E-mail : jambudweeptirth@gmail.com, rk195057@yahoo.com
Facebook : jaintirthjambudweep

COURTESY–JAIN BOOK DEPOT
C/o Shri Nabhi Kumar Manav Kumar Jain
C-4, Opp. PVR Plaza, Cannaught Place, New Delhi-1
Ph.-011-23416101-02-03/Website : www.jainbookdepot.com

प्रथम संस्करण	वीर नि. सं. 2541, आश्विन शुक्ला	मूल्य
1100 प्रतियाँ	27 अक्टूबर 2015, पूर्णिमा	24/-रु.

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान द्वारा संचालित

वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला

इस ग्रन्थमाला में दिगम्बर जैन आर्षमार्ग का पोषण करने वाले हिन्दी, संस्कृत, प्राकृत, कन्नड़, अंग्रेजी, गुजराती, मराठी आदि भाषाओं के न्याय, सिद्धान्त, अध्यात्म, भूगोल-खगोल, व्याकरण आदि विषयों पर लघु एवं वृहद् ग्रंथों का मूल एवं अनुवाद सहित प्रकाशन होता है। समय-समय पर धार्मिक लोकोपयोगी लघु पुस्तिकाएँ भी प्रकाशित होती रहती हैं।

–: संस्थापिका एवं प्रेरणास्रोत :–

परमपूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि श्री ज्ञानमती माताजी
(दो बार डी.लिट्. की मानद उपाधि से अलंकृत)

–: मार्गदर्शन :–

प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चन्दनामती माताजी
(पीएच.डी. की मानद उपाधि से अलंकृत)

–: निर्देशक एवं सम्पादक:–

कर्मयोगी पीठाधीश स्वस्तिश्री रवीन्द्रकीर्ति स्वामीजी

–: प्रबंध सम्पादक :–

जीवन प्रकाश जैन

सर्वाधिकार प्रकाशकाधीन

कम्पोजिंग - ज्ञानमती नेटवर्क
जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर (मेरठ) उ.प्र.

सम्पादकीय

पीठाधीश स्वस्ति श्री रवीन्द्रकीर्ति स्वामी

ऊँ नमो मंगलं कुर्यात् , ह्रीं नमश्चापि मंगलम्।
मोक्षबीजं महामंत्रं, अर्हं नमः सुमंगलम्।।

जैन परम्परा में उपयोग तीन प्रकार का माना गया है। अशुभोपयोग, शुभोपयोग एवं शुद्धोपयोग। इन तीनों उपयोगों में से कोई न कोई उपयोग प्रतिक्षण जीव में चला ही करता है, जिसमें से अशुभोपयोग तो दुर्गति का कारण पापरूप है, जो सर्वथा हेय है। बात है उपादेयता की, शेष दोनों शुभोपयोग व शुद्धोपयोग उपादेय हैं। चूँकि गृहस्थ श्रावक के शुभोपयोग के अलावा शुद्धोपयोग हो नहीं सकता इसलिए शुभोपयोग ही उपादेय ठहरता है। शुद्धोपयोग वीतराग चारित्र से अविनाभावी है और वीतरागी चारित्र निर्ग्रंथ मुनियों के ही संभव है अतः श्रावकों को प्रयत्नपूर्वक शुभोपयोग की भावना में ही प्रवृत्त होना चाहिए। पूजन पाठ, सामायिक, दान आदि समस्त धार्मिक क्रियायें पुण्यरूप हैं और शुभोपयोग हैं, इसलिए श्रावकों द्वारा शांति विधान, सिद्धचक्र विधान आदि मण्डल विधान करने की परम्परा प्राचीन काल से चली आ रही है। श्रावकों के षट् आवश्यक कार्यों में देवपूजा प्रथम आवश्यक कार्य है।

जैन समाज की सर्वोच्च साध्वी परमपूज्य चारित्रचन्द्रिका गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी ने इन्द्रध्वज, कल्पद्रुम, सर्वतोभद्र, तीनलोक, शांतिविधान, ऋषिमण्डल आदि छोटे-बड़े 100 विधानों की एवं 300 ग्रंथों की रचना की हैं। जिनमें से अभी कुछ विधान एवं ग्रंथ अप्रकाशित हैं। विधानों की श्रृंखला में यह **''श्री अरिष्टनेमि तीर्थंकर विधान''** रचकर नूतनकृति के रूप में पूज्य माताजी ने हम सबको प्रदान किया है। यह विधान सभी रोग, शोक, दुख, दारिद्र्य को दूर करके सुख को प्रदान करने वाला है। भक्ति करते-करते भक्त जब एक दिन भगवान बन सकता है तो भक्ति से छोटे-छोटे कार्य तो सिद्ध हो ही जाएंगे। यह नूतन विधान सभी के लिए मंगलकारी हो, यही मंगल भावना है। पूज्य माताजी स्वस्थ रहें, दीर्घायु प्राप्त करें एवं वीर ज्ञानोदय ग्रंथमाला दिन दूनी रात चौगुनी वृद्धि करे, यही जिनेन्द्रदेव से मंगल प्रार्थना है।

प्रस्तावना

प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चन्दनामती

जैनधर्म के 22वें तीर्थंकर भगवान नेमिनाथ हुए हैं। भगवान नेमिनाथ का जन्म शौरीपुर नगर में एवं मोक्ष गिरनार जी सिद्धक्षेत्र पर हुआ। भगवान नेमिनाथ का जीवनवृत्त बड़ा ही रोमांचक रहा है जिन्होंने यौवन में जब राजीमती के साथ उनका विवाह होने जा रहा था तब विवाह के समय पशुबंधन को देखकर उसी समय सारे बंधन को तोड़ दिया। राजीमती मोह परिग्रह को भी छोड़कर तपश्री से नाता जोड़ लिया अर्थात् विवाह न करके दीक्षा धारण कर ली।

जैन समाज की सर्वोच्च साध्वी दिव्यशक्ति परम पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी ने 24 तीर्थंकरों के पृथक्-पृथक् विधानों की श्रृंखला में यह **'श्री अरिष्टनेमि तीर्थंकर विधान'** लिखकर प्रदान किया है। इस विधान में सर्वप्रथम तीर्थंकर श्री नेमिनाथ का, उनकी जन्मभूमि शौरीपुर तीर्थ का एवं निर्वाण भूमि गिरनार जी सिद्धक्षेत्र का परिचय दिया है।

इस विधान के शुभारम्भ में मंगलाचरण करते हुए पूज्य माताजी ने लिखा है—

जंतून् विलोक्यांशु दयां चकार, राजीमतीं सर्वपरिग्रहं च।
त्यक्त्वा गृहीत् धर्मधुरं सुदीक्षां, तं नेमिनाथं शिरसा नमामि।।

मंगलाचरण के बाद श्री नेमिनाथ का स्तोत्र दिया है जिसमें भगवान नेमिनाथ का जीवनवृत्त गागर में सागर के समान समाहित है। जिसे पढ़कर स्वाध्याय का पूरा लाभ मिल जाएगा। स्तोत्र के बाद में श्री अर्हंत पूजा दी है। अर्हंत पूजा के बाद श्री नेमिनाथ भगवान की पूजा सुन्दर तर्जों में पंचकल्याणक अर्घ्य के साथ दी है। जैसे—

आओ हम सब करें अर्चना, प्रभु के पंच कल्याण की।
इन्द्र सभी मिल भक्ती करते, तीर्थंकर भगवान की।।
वन्दे जिनवरम्-4।।

पंचकल्याणक अर्घ्य के बाद में 108 अर्घ्य भगवान के नाम के 108 मंत्रों सहित दिए हैं। 108 अर्घ्य के बाद में भगवान नेमिनाथ के शासनदेव सर्वाण्हयक्ष एवं शासनदेवी कूष्मांडी यक्षी का अर्घ्य भी दिया है। इसके बाद में 108 बार

जाप्य करने हेतु मंत्र है। भगवान के नाम मंत्र की 1 माला करने के बाद जयमाला है जिसमें भगवान के समवसरण का सुन्दर वर्णन है—

वरदत्त आदि ग्यारह गणधर, अठरह हजार मुनिराज वहाँ।
राजीमति गणिनी आदिक, चालिस हजार संयतिकाएं वहाँ।।
इक लाख सुश्रावक तीन लाख, श्राविका झुकीं तव चरणों में।
नेमी भगवन् ! शत शत वंदन, शत शत वंदन तव चरणों में।।

पूज्य माताजी द्वारा रचित विधानों में एक-एक शब्द मोती की माला के समान पिरोए हुए हैं। जिन्हें पढ़कर एक असीम आनन्द का अनुभव होता है।

विधान के अंत में पूज्य माताजी ने यह भावना भाई है कि यह विधान सम्पूर्ण रोग, शोक, दुख को दूर करें और अनुक्रम से एक दिन मुक्ति लक्ष्मी को प्राप्त कराएं। इसकी प्रशस्ति में पूज्य माताजी ने लिखा है कि भगवान की निर्वाणभूमि गिरनार क्षेत्र पर पांचवीं टोंक पर नेमिनाथ के चरण इन्द्र ने उत्कीर्ण किए थे ऐसा आचार्यों ने प्राचीन ग्रंथ में लिखा है।

प्रशस्ति के पश्चात् मेरे द्वारा रचित शौरीपुर तीर्थ की पूजा, श्री नेमिनाथ भगवान की आरती एवं शौरीपुर तीर्थ की आरती है।

इस विधान में कुल 3 पूजा, 108 अर्घ्य, 1 पूर्णार्घ्य एवं 3 जयमालायें हैं।

यह **'श्री अरिष्ट नेमितीर्थंकर विधान'** विधान करने एवं कराने वाले सभी भव्यजीवों के लिए मंगलकारी हो, यही भगवान से मंगल प्रार्थना है। विधान रचयित्री पूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिका शिरोमणि श्री ज्ञानमती माताजी स्वस्थ रहें एवं दीर्घायु प्राप्त करें, यही मंगल भावना है।

हार्दिक उद्गार

–ब्र. कु. बीना जैन (संघस्थ)

नमः श्री वर्धमानाय, निर्धूत कलिलात्मने।
सालोकानां त्रिलोकानां, यद्विद्या दर्पणायते।।

बीसवीं शताब्दी में मुनि परम्परा को जीवन्त करने वाले युगप्रवर्तक चारित्र चक्रवर्ती आचार्य श्री शान्तिसागर जी महाराज हुए हैं। जिनकी चर्या चतुर्थकालीन सम मुनियों के समान थी। इनके प्रथम पट्टशिष्य आचार्य श्री वीरसागर जी महाराज के करकमलों से आर्यिका दीक्षा प्राप्त कर, आर्यिका ज्ञानमती नाम पाकर, स्वनाम को सार्थक करते हुए परम पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी ने चारों अनुयोगों का तलस्पर्शी ज्ञान प्राप्त करके, ग्रंथों का खूब स्वाध्याय करके, अपने ज्ञान को परिपक्व करके 'सहस्रनाम मंत्र' की रचना से अपनी लेखनी का शुभारम्भ करके अब तक छोटे–बड़े सभी ग्रंथों को मिलाकर 400 ग्रंथों की रचना की है।

आज के वैज्ञानिक युग में टी. वी. के पारस, जिनवाणी, अरिहंत, मंगल कलश आदि चैनलों के माध्यम से लोग घर बैठे पूज्य माताजी के मुखारविन्द से प्रतिदिन ज्ञानामृत का पान करते हैं। जब वे हस्तिनापुर आकर पूज्य माताजी का दर्शन करते हैं, तो गद्गद् होकर कहते हैं कि माताजी हम तो आपके शुद्ध शास्त्रीय, आगमानुसार प्रवचन सुनकर धन्य हो गए।

वास्तव में पूज्य माताजी ने भगवान महावीर की दिव्यध्वनि से निकली द्वादशांग वाणी को जिन्हें पूर्वाचार्यों ने ग्रंथरूप में लिपिबद्ध किया है उसी को आत्मसात करके, जन–जन के हिताय प्रवचन के द्वारा तथा ग्रंथों के द्वारा प्रदान कर रही हैं। अष्टसहस्री जैसे क्लिष्ट न्याय के ग्रंथ का अनुवाद करके पूज्य माताजी ने एक महान् कार्य किया है। विद्वद्वर्ग, युवावर्ग, बालवर्ग सभी के लिए पूज्य माताजी ने समयसार, नियमसार की टीका, कल्पद्रुम, इन्द्रध्वज आदि विधान, प्रतिज्ञा, परीक्षा, जीवनदान आदि उपन्यास एवं बालविकास के 4 भाग, जैसी पुस्तकें लिखकर सर्वांगीण ज्ञान का प्रचार प्रसार किया है। 24 तीर्थंकर विधानों की श्रृंखला में यह बाइसवें तीर्थंकर श्री नेमिनाथ भगवान का विधान है।

मेरा परम सौभाग्य है कि पूज्य माताजी की कुल परम्परा में जन्म लेकर, उन्हें गुरुरूप में पाकर और उनसे ज्ञानामृत को प्राप्त कर अपने जीवन को धन्य किया है। सच्चे देव, शास्त्र, गुरु के प्रति भक्ति को करते हुए अपनी नारी पर्याय को सफल करूँ यही मंगल भावना है। पूज्य माताजी दीर्घायु हों, स्वस्थ रहें, यही जिनेन्द्रदेव से मंगल प्रार्थना करते हुए, ज्ञान की भण्डार पूज्य माताजी के चरणों में कोटि–कोटि नमन करती हूँ।

परमपूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि

श्री ज्ञानमती माताजी का संक्षिप्त-परिचय

-प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चन्दनामती

जन्मस्थान– टिकैतनगर (बाराबंकी) उ.प्र.

जन्मतिथि– आसोज सुदी 15 (शरदपूर्णिमा) वि. सं. 1991, (22 अक्टूबर सन् 1934)

जाति– अग्रवाल दि. जैन, **गोत्र–** गोयल, **नाम–** कु. मैना

माता-पिता– श्रीमती मोहिनी देवी एवं श्री छोटेलाल जैन

आजन्म ब्रह्मचर्य व्रत– ई. सन् 1952, बाराबंकी में शरदपूर्णिमा के दिन

क्षुल्लिका दीक्षा– चैत्र कृ. 1, ई. सन् 1953 को महावीरजी अतिशय क्षेत्र (राज.) में आचार्यरत्न श्री देशभूषण जी महाराज से। नाम-क्षुल्लिका वीरमती

आर्यिका दीक्षा– वैशाख कृ. 2, ई. सन् 1956 को माधोराजपुरा (राज.) में चारित्रचक्रवर्ती 108 आचार्य श्री शांतिसागर जी की परम्परा के प्रथम पट्टाधीश आचार्य श्री वीरसागर जी महाराज के करकमलों से।

साहित्यिक कृतित्व– अष्टसहस्री, समयसार, नियमसार, मूलाचार, कातंत्र-व्याकरण, षट्खण्डागम आदि ग्रंथों के अनुवाद/टीकाएं एवं लगभग 300 ग्रंथों की लेखिका।

डी.लिट्. की मानद उपाधि– सन् 1995 में अवध वि.वि. (फैजाबाद) द्वारा एवं तीर्थंकर महावीर विश्वविद्यालय मुरादाबाद द्वारा 8 अप्रैल 2012 को "डी.लिट्." की मानद उपाधि से विभूषित।

तीर्थ निर्माण प्रेरणा– हस्तिनापुर में जंबूद्वीप, तेरहद्वीप, तीनलोक आदि रचनाओं के निर्माण, शाश्वत तीर्थ अयोध्या का विकास एवं जीर्णोद्धार, प्रयाग-इलाहाबाद (उ.प्र.) में तीर्थंकर ऋषभदेव तपस्थली तीर्थ का निर्माण, तीर्थंकर जन्मभूमियों का विकास यथा-भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा-बिहार) में 'नंद्यावर्त महल' नामक तीर्थ निर्माण, भगवान पुष्पदंतनाथ की जन्मभूमि काकन्दी तीर्थ (निकट गोरखपुर-उ.प्र.) का विकास, भगवान पार्श्वनाथ केवलज्ञानभूमि अहिच्छत्र तीर्थ पर तीस चौबीसी मंदिर, हस्तिनापुर में जम्बूद्वीप स्थल पर भगवान शांतिनाथ-कुंथुनाथ-अरहनाथ की 31-31 फुट उत्तुंग खड्गासन प्रतिमा, मांगीतुंगी में निर्माणाधीन 108 फुट उत्तुंग भगवान ऋषभदेव की विशाल प्रतिमा, महावीर जी तीर्थ पर महावीर धाम में पंचबालयति मंदिर, शिर्डी में ज्ञानतीर्थ, सम्मेदशिखर में आचार्य श्री शांतिसागर धाम, ग्वालियर में चिन्तामणि पार्श्वनाथ अतिशय क्षेत्र इत्यादि।

महोत्सव प्रेरणा– पंचवर्षीय जम्बूद्वीप महामहोत्सव, भगवान ऋषभदेव अंतर्राष्ट्रीय निर्वाण महामहोत्सव, अयोध्या में भगवान ऋषभदेव महाकुंभ मस्तकाभिषेक, कुण्डलपुर महोत्सव, भगवान पार्श्वनाथ जन्मकल्याणक तृतीय सहस्राब्दि महोत्सव, दिल्ली में कल्पद्रुम महामण्डल विधान का ऐतिहासिक आयोजन इत्यादि। विशेषरूप से 21 दिसम्बर 2008 को जम्बूद्वीप स्थल पर विश्वशांति अहिंसा सम्मेलन का आयोजन हुआ, जिसका उद्घाटन भारत की तत्कालीन राष्ट्रपति श्रीमती प्रतिभा देवीसिंह पाटील द्वारा किया गया।

शैक्षणिक प्रेरणा– 'जैन गणित और त्रिलोक विज्ञान' पर अंतर्राष्ट्रीय संगोष्ठी, राष्ट्रीय कुलपति सम्मेलन, इतिहासकार सम्मेलन, न्यायाधीश सम्मेलन एवं अन्य अनेक राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय स्तर के सेमिनार, ऑनलाइन जैन इनसाइक्लोपीडिया आदि।

रथ प्रवर्तन प्रेरणा– जम्बूद्वीप ज्ञानज्योति (1982 से 1985), समवसरण श्रीविहार (1998 से 2002), महावीर ज्योति (2003-2004) आचार्य श्री शांतिसागर सम्मेदशिखर ज्योति रथ (2014) भगवान ऋषभदेव विश्वशांति कलश यात्रा-मांगीतुंगी (2015) के दो रथों का भारत भ्रमण।

इस प्रकार नित्य नूतन भावनाओं की जननी पूज्य माताजी चिरकाल तक इस वसुधा को सुशोभित करती रहें, यही मंगल कामना है।

विषयानुक्रमणिका

	विषय	पृष्ठ संख्या
1.	तीर्थंकर नेमिनाथ का परिचय	1
2.	शौरीपुर तीर्थ का परिचय	10
3.	श्री गिरनार जी सिद्धक्षेत्र का परिचय	13
4.	श्री अरिष्ट नेमितीर्थंकर विधान-मंगलाचरण	18
5.	श्री नेमिनाथ स्तोत्र	18
6.	श्री अर्हंत पूजा	20
7.	श्री अरिष्ट नेमितीर्थंकर पूजा	25
8.	अथ 108 अर्घ्य	30
9.	जयमाला	43
10.	प्रशस्ति	45
11.	भगवान नेमिनाथ जन्मभूमि शौरीपुर तीर्थ पूजा	46
12.	श्री नेमिनाथ भगवान की आरती	52
13.	शौरीपुर तीर्थ की आरती	53
14.	भजन- हम आए हैं निगोद से, आशाएं संजो के।.....	54
15.	भजन-मेरे देश की धरती ज्ञानमती माता से धन्य हुई है	55
16.	भजन–जिनमंदिर का निर्माण, करो सब मिल के करो....	56

मण्डल विधान का नक्शा

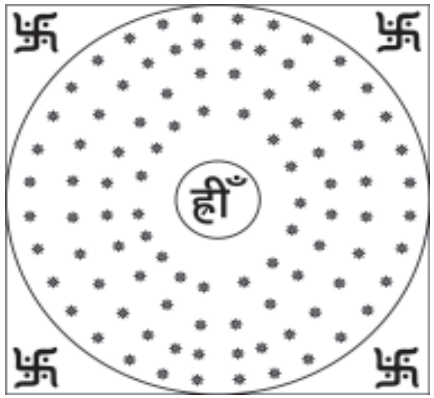

कुल पूजा–3, अर्घ्य 108, पूर्णार्घ्य–1, जयमाला–3।

तीर्थंकर नेमिनाथ का परिचय

–गणिनी आर्यिका ज्ञानमती

पुष्करार्ध द्वीप के पश्चिम सुमेरू की पश्चिम दिशा में जो महानदी (सीतोदा नदी है) उसके उत्तर तट पर एक गंधिल नाम का महादेश है। उसके विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी में सूर्यनगर का स्वामी सूर्यप्रभ राजा राज्य करता था। उसकी स्त्री का नाम धारिणी था। दोनों के चिन्तागति, मनोगति और चपलगति नाम के तीन पुत्र हुए। उसी विजयार्ध की उत्तर श्रेणी के अरिन्दमन नगर में राजा अरिंजय की अजितसेना रानी से प्रीतिमती नाम की पुत्री हुई। उसने यह प्रतिज्ञा की थी कि जो विद्या से मेरु की प्रदक्षिणा में मुझे जीत लेगा मैं उसी से विवाह करूँगी। उसने अपनी विद्या से चिन्तागति को छोड़कर समस्त विद्याधर कुमारों को मेरुपर्वत की तीन प्रदक्षिणा में जीत लिया।

तब चिन्तागति उसे अपने वेग से जीतकर कहने लगा कि तू रत्नों की माला से मेरे छोटे भाई को स्वीकार कर। प्रीतिमती बोली, जिसने मुझे जीता है उसके सिवाय मैं दूसरे का वरण नहीं करूँगी। चिन्तागति ने कहा, चूँकि तूने पहले उन्हें प्राप्त करने की इच्छा से ही मेरे छोटे भाई के साथ गति युद्ध किया था अतः तू मेरे लिये त्याज्य है। चिन्तागति के यह वचन सुनते ही वह विरक्त हो गई और विवृत्ता नाम की आर्यिका के पास जाकर दीक्षित हो गई। यह देख वहाँ बहुत से लोगों ने दीक्षा धारण कर ली। कन्या का यह साहस देखकर चिन्तागति ने भी अपने दोनों भाइयों के साथ दमवर नामक गुरु के पास दीक्षा ले ली। बहुत काल तक तपश्चरण करते हुये वे तीनों समाधिपूर्वक मरकर चौथे स्वर्ग में देव हो गये।

मनोगति और चपलगति नाम के दोनों छोटे भाई के जीव स्वर्ग से च्युत हुए। जम्बूद्वीप सम्बन्धी पूर्व विदेह क्षेत्र के पुष्कला देश में जो विजयार्ध पर्वत है उसकी उत्तर श्रेणी में गगनवल्लभ नगर के राजा गगनचन्द की गगनसुंदरी रानी से दोनों देव के जीव अमितगति और अमिततेज नाम के पुत्र उत्पन्न हो गये।

इसी जम्बूद्वीप के पश्चिम विदेह में सीतोदा के उत्तर तट पर सुगंधिलादेश

में एक सिंहपुर नाम का नगर है। उसके अर्हदास राजा की जिनदत्ता रानी से चिंतागति देव का जीव स्वर्ग से च्युत होकर पुत्र हो गया। माता-पिता ने उसका नाम अपराजित रखा था।

किसी दिन राजा अर्हदास ने मनोहर नामक उद्यान में पधारे हुए विमलवाहन तीर्थंकर की वंदना करके धर्मरूपी अमृत का पान किया। अनन्तर अपराजित पुत्र को राज्य देकर पाँच सौ राजाओं के साथ मुनि हो गये। कुमार अपराजित पिता के दिये हुए राज्य का संचालन करने लगे और सम्यग्दर्शन तथा अणुव्रत से विभूषित होकर धर्म का पालन करने लगे। किसी दिन उन्होंने सुना कि 'हमारे पिता के साथ श्री विमलवाहन भगवान गंधमादन पर्वत से मोक्ष प्राप्त कर चुके हैं।' यह सुनते ही उन्होंने प्रतिज्ञा की कि ' मैं विमलवाहन भगवान के दर्शन किये बिना भोजन नहीं करूँगा।' इस प्रतिज्ञा से उसे आठ दिन का उपवास हो गया। तदनंतर इन्द्र की आज्ञा से यक्षपति ने उस राजा को भगवान विमलवाहन का साक्षात्कार कराकर दर्शन कराया अर्थात् समवसरण बनाकर विमलवाहन का दर्शन कराया।

किसी एक दिन बसंत ऋतु में अष्टान्हिका के समय बुद्धिमान राजा अपराजित जिन प्रतिमाओं की पूजा स्तुति करके वहीं पर बैठे हुए धर्मोपदेश कर रहे थे कि उसी समय आकाश से दो चारणऋद्धिधारी मुनिराज आकर वहीं पर विराजमान हो गये। राजा ने उनके सम्मुख जाकर बड़ी विनय से उनके चरणों में नमस्कार किया, धर्मोपदेश सुना अनन्तर कहा कि हे पूज्य! मैंने पहले कभी आपको देखा है। उनमें से ज्येष्ठ मुनि बोले-हाँ राजन्! ठीक कहते हो, आपने हम दोनों को देखा है परंतु कहाँ देखा है? वह स्थान मैं कहता हूँ सो सुनो–

पुष्करार्ध द्वीप के पश्चिम मेरु संबंधी पश्चिम विदेह में गंधिल नाम का महादेश है। उसके विजयार्ध की उत्तर श्रेणी में सूर्यप्रभ नगर के राजा सूर्यप्रभ के चिंतागति, मनोगति और चपलगति नाम के तीन पुत्र थे। प्रीतिमती नाम की विद्याधर कन्या के गतियुद्ध के प्रसंग में हम तीनों ने दीक्षित होकर तपश्चरण करके चतुर्थ स्वर्ग को प्राप्त किया था।

वहाँ से च्युत होकर हम दोनों छोटे भाई पूर्व विदेह में अमितगति और

अमिततेज नाम के विद्याधर हुए हैं। किसी एक दिन हम दोनों पुण्डरीकिणी नगरी गये। वहाँ श्री स्वयंप्रभ तीर्थंकर से हम दोनों ने अपने पिछले तीन जन्मों का वृत्तांत पूछा। तब भगवान ने सब भवावली बतलाई। अनन्तर हमने पूछा कि हमारा बड़ा भाई इस समय कहाँ है? इसके उत्तर में भगवान ने कहा कि वह सिंहपुर का अपराजित नाम का राजा है। यह सुनकर हम दोनों ने उन्हीं के पास जैनेश्वरी दीक्षा ग्रहण कर ली और तुम्हें देखने के लिए जन्मान्तर के स्नेहवश यहाँ आये हैं। अब तुम्हारी आयु केवल एक माह की शेष रह गई है शीघ्र ही आत्म कल्याण करो। हे अपराजित! तुम इससे पाँचवें भव में भरत-क्षेत्र के हरिवंश नामक महावंश में 'अरिष्टनेमि' नाम के तीर्थंकर होवोगे।' यह सुनकर राजा ने बार-बार उन मुनियों की वंदना की और कहा कि आप यद्यपि निर्ग्रंथ अवस्था को प्राप्त हुए हैं तो भी जन्मांतर के स्नेह से आपने मेरा बड़ा ही उपकार किया है। अनंतर मुनिराज के चले जाने के बाद राजा अपने पुत्र को राज्य देकर आप प्रायोपगमन संन्यास विधि से मरण करके सोलहवें स्वर्ग में अच्युतेन्द्र हो गये।

वह पुण्यात्मा वहाँ के दिव्य भोगों का अनुभव कर आयु के अंत में वहाँ से च्युत हुआ। इसी जंबूद्वीप के भरतक्षेत्र संबंधी कुरुजांगल देश में हस्तिनापुर के राजा श्रीचन्द्र की श्रीमती रानी से सुप्रतिष्ठ नाम का यशस्वी पुत्र हुआ। कालांतर में पिता द्वारा प्रदत्त राज्य का निष्कंटक उपभोग करते हुये किसी दिन यशोधर नामके मुनिराज को आहारदान देकर पंचाश्चर्य को प्राप्त किया। किसी दूसरे दिन वह राजा रानियों के साथ राजमहल की छत पर बैठा हुआ दिशाओं की शोभा का अवलोकन कर रहा था कि इसी बीच अकस्मात् उल्कापात को देखकर विरक्त हो गया और सुमंदर नामक जिनेन्द्र भगवान के पास जाकर जैनेश्वरी दीक्षा ग्रहण कर ली।

''मुनिराज सुप्रतिष्ठ ने ग्यारह अंग और चौदह पूर्वों का अध्ययन किया और सर्वतोभद्र को आदि लेकर सिंहनिष्क्रीडितपर्यन्त अनेकों व्रतों का अनुष्ठान किया। हे महाभाग! श्रवण मात्र से ही पापों को नष्ट करने वाले उन उपवासों की महाविधि को तुम स्थिर मन कर के सुनो।'' ऐसा हरिवंश पुराण में बताया है। यहाँ इन व्रतों की विधि न बतलाकर केवल कुछ नाममात्र दिये जाते हैं।

विशेष जिज्ञासुओं को हरिवंश पुराण में देखना चाहिए।

''सर्वतोभद्र, वसंतभद्र, महासर्वतोभद्र, त्रिलोकसार, वज्रमध्य, मृदंगमध्य, मुरजमध्य, एकावली, द्विकावली, मुक्तावली, रत्नावली, रत्नमुक्तावली, कनकावली, द्वितीय रत्नावली, सिंहनिष्क्रीडित, मध्यम सिंहनिष्क्रीडित तथा उत्तम और जघन्य सिंहनिष्क्रीडित, नंदीश्वर पंक्ति, मेरुपंक्ति, विमानपंक्ति, शात कुंभ, चान्द्रायण, सप्तसप्तमतपोविधि, अष्टाष्टम, नवनवमादि, आचाम्लवर्धन, श्रुतविधि, दर्शनशुद्धि, तपःशुद्धि, चारित्रशुद्धि, एककल्याण, पंचकल्याण, शीलकल्याण विधि, भावनाविधि, पंचविंशति-कल्याण भावनाव्रत, दुःखहरण कर्मक्षय, जिनेंद्रगुण संपत्ति, दिव्यलक्षणपंक्ति, धर्मचक्रविधि, परस्पर कल्याण, परिनिर्वाण, प्रातिहार्य प्रसिद्धि, विमान पंक्ति आदि व्रत।

''इस प्रकार विधिवत् इन व्रतों के कर्ता सुप्रतिष्ठ मुनिराज ने उस समय निर्मल सोलहकारण भावनाओं के द्वारा तीर्थंकर नाम कर्म का बंध कर लिया।''

जब आयु का अंत आया तब समाधि धारण कर एक महीने का संन्यास लेकर प्राणों का त्याग किया और जयंत नामक अनुत्तर विमान में अहमिंद्र पद प्राप्त कर लिया। वहां पर तेंतीस सागर की आयु थी और एक हाथ ऊँचा शरीर था। उनको साढ़े सोलह माह के अंत में एक बार श्वास का ग्रहण होता है। तेंतीस हजार वर्ष बीत जाने पर एक बार मानसिक आहार था। इस प्रकार सुख सागर में निमग्न उन अहमिंद्र ने वहां की आयु को समाप्त कर दिया।

नेमिनाथ का जन्म–

कुशार्थ देश के शौरीपुर नगर में हरिवंशी राजा शूरसेन रहते थे। उनके वीर नाम के पुत्र की धारिणी रानी से अंधकवृष्टि और नरवृष्टि नाम के दो पुत्र हुए। अंधकवृष्टि की रानी का नाम सुभद्रा था। इन दोनों के समुद्रविजय, स्तिमितसागर, हिमवान्, विजय, अचल, धारण, पूरण, पूरितार्थीच्छ, अभिनंदन और वासुदेव ये दस पुत्र थे तथा कुन्ती और माद्री नाम की दो पुत्रियाँ थीं।

समुद्रविजय की रानी का नाम शिवादेवी था। पिता के द्वारा प्रदत्त राज्य का श्री समुद्रविजय महाराज धर्मनीति से संचालन करते थे। छोटे भाई वसुदेव

की रोहिणी से बलभद्र एवं देवकी रानी से श्रीकृष्ण का जन्म हुआ था।

तिलोयपण्णत्ति ग्रंथ के अनुसार भगवान नेमिनाथ का जन्म शौरीपुर में ही हुआ है। हरिवंशपुराण में भी भगवान का जन्म शौरीपुर में ही माना है।

जब जयंत विमान के इन्द्र की आयु छह मास की शेष रह गई तब काश्यपगोत्री, हरिवंश शिखामणि शौरीपुर के राजा समुद्रविजय की रानी शिवादेवी के आंगन में देवों द्वारा की गई रत्नों की वर्षा होने लगी। कार्तिक शुक्ला षष्ठी के दिन उत्तराषाढ़ नक्षत्र में वह अहमिंद्र का जीव रानी के गर्भ में आ गया।

अनंतर नवमास के बाद श्रावण शुक्ला षष्ठी के दिन चित्रा नक्षत्र में ब्रह्मयोग के समय तीन ज्ञान के धारक भगवान का जन्म हुआ। इंद्रादि देवों ने जन्मोत्सव मनाकर तीर्थंकर शिशु का 'नेमिनाथ' नामकरण किया। भगवान नमिनाथ के बाद पाँच लाख वर्ष बीत जाने पर नेमिजिनेन्द्र उत्पन्न हुये हैं। उनकी आयु एक हजार वर्ष की थी, शरीर दस धनुष ऊँचा था। प्रभु के शरीर का वर्ण नील कमल के सदृश होते हुये भी इतना सुन्दर था कि इंद्र ने एक हजार नेत्र बना लिये फिर भी रूप को देखते हुये तृप्त नहीं हुआ था।

पुनः हरिवंशपुराण में ऐसा वर्णन आया है कि जब कृष्ण ने कंस का वध किया अनंतर जरासंध के भाई अपराजित का भी वध कर दिया। तब कुपित हो जरासंध ने शौरीपुर की ओर सेना भेजी। उसी मध्य देवताओं ने युक्ति से युद्ध रोक दिया, यद्यपि ये जानते थे प्रभु नेमिनाथ तीर्थंकर हैं और श्रीकृष्ण नारायण तथा बलदेव बलभद्र हैं। नारायण के द्वारा ही जरासंध का वध होगा फिर भी अभी समय की प्रतीक्षा की जावे, ऐसा समझकर तीर्थंकर एवं नारायण के पुण्य प्रभाव से ही एवं इंद्र की आज्ञा से कुबेर ने समुद्र के बीच में ही एक द्वारावती नगरी की रचना कर दी।

भगवान देवों द्वारा लाई गई दिव्य भोगसामग्री का अनुभव करते हुये चिरकाल तक द्वारावती में रहे। किसी एक दिन मगध देश के कुछ व्यापारी उस नगरी में आ गये और वहाँ से श्रेष्ठरत्न खरीद कर अपने देश में ले गये तथा अर्धचक्री (प्रतिनारायण) राजा जरासंध को रत्न भेंट किये। राजा ने उन रत्नों को देखकर महान आश्चर्य चकित होकर उनसे पूछा कि आप ये रत्न कहाँ से लाये हो? उत्तर में उन लोगों ने श्रीकृष्ण और भगवान नेमिनाथ के

वैभव का वर्णन कर दिया। यह सुनते ही जरासंध कुपित होकर युद्ध करने को तैयार हो गया।

'शत्रु चढ़कर आ गया है' यह समाचार सुनकर श्री कृष्ण को जरा भी चिंता नहीं हुई। वे भगवान नेमिनाथ के पास गये और बोले कि आप इस नगर की रक्षा कीजिये। सुना है कि राजा जरासंध हम लोगों को जीतना चाहता है सो मैं उसे आपके प्रभाव से घुने हुये जीर्णवृक्ष के समान शीघ्र ही नष्ट किये देता हूँ। श्रीकृष्ण के वचन सुनकर प्रभु ने अपने आप अवधिज्ञान से विजय को निश्चित जानकर मुस्कुराते हुये 'ओम्' शब्द कह दिया अर्थात् अपनी स्वीकृति दे दी। श्रीकृष्ण भी प्रभु की मुस्कान से अपनी विजय को निश्चित समझकर समस्त हरिवंशी राजकुमार और पांडव आदिकों के साथ कुरुक्षेत्र में आ गये।

इस भयंकर युद्ध में राजा जरासंध ने कुपित होकर चक्र श्रीकृष्ण पर चला दिया। वह चक्ररत्न भी श्रीकृष्ण की प्रदक्षिणा देकर उनकी दाहिनी भुजा पर ठहर गया, बस क्या था श्रीकृष्ण ने उसी चक्र से जरासंध का काम समाप्त कर दिया और तत्क्षण ही देवों द्वारा पूजा को प्राप्त हुए। अर्ध चक्री (नारायण) हो गये। अनंतर बड़े हर्ष से इन लोगों ने द्वारावती में प्रवेश किया और वहाँ पर राज्याभिषेक को प्राप्त हुए।

''किसी एक दिन कुबेर द्वारा भेजे हुए वस्त्राभरणों से अलंकृत युवा श्री नेमिकुमार, बलदेव तथा नारायण आदि कोटि-कोटि राजागण एवं राजपुत्रों से भरी हुई कुसुमचित्रा नाम की सभा में गये। राजाओं ने अपने-अपने आसन छोड़ प्रभु के सन्मुख आकर उन्हें नमस्कार किया। श्रीकृष्ण ने भी आकर उनकी अगवानी की। तदनंतर श्रीकृष्ण के साथ वे उनके आसन को अलंकृत करने लगे।

वहाँ वार्तालाप के प्रसंग में बलवानों की गणना छिड़ने पर किसी ने अर्जुन को, किसी ने युधिष्ठिर को इत्यादिरूप से किसी ने श्रीकृष्ण को अत्यधिक बलशाली कहा। तरह-तरह की वाणी सुनकर बलदेव ने लीलापूर्ण दृष्टि से भगवान की ओर देखकर कहा कि तीनों जगत में इनके समान दूसरा बलवान् नहीं है, ये गिरिराज को अनायास ही कंपायमान कर सकते हैं, यथार्थ में ये जिनेंद्र हैं इनसे उत्कृष्ट दूसरा कौन हो सकता है?

इस प्रकार वचन सुनकर श्रीकृष्ण ने भगवान से कहा–भगवन्! यदि आपके शरीर का ऐसा उत्कृष्ट बल है तो बाहुयुद्ध में उसकी परीक्षा क्यों न ली जाये? भगवान ने कहा-हे अग्रज! यदि आपको मेरी भुजाओं का बल जानना ही है तो मल्लयुद्ध की क्या आवश्यकता है? सहसा इस आसन से मेरे इस पैर को ही विचलित कर दीजिये। श्रीकृष्ण उसी समय कमर कसकर जिनेंद्र भगवान को जीतने की इच्छा से उठ खड़े हुए परन्तु पैर का चलाना तो दूर ही रहा वे एक अंगुली को भी नहीं हिला सके। वे पसीने से लथपथ हो गये, उनके मुख से गरम-गरम सांसें निकलने लगीं। तब उन्होंने अहंकार छोड़कर स्पष्ट शब्दों में कहा-हे देव! आपका बल लोकोत्तर एवं आश्चर्यकारी है। उसी समय इन्द्र का आसन कंपित होने से देवों सहित इन्द्र ने आकर भगवान की अनेकों स्तुतियों से स्तुति और पूजा की। तदनंतर सब अपने-अपने महलों में चले गये। उसी समय से श्रीकृष्ण के मन में यह आशंका हो गई कि इन बलशाली जिनेंद्र के रहते हुए मेरा राज्यशासन स्थिर कैसे रहेगा?

नेमिनाथ का वैराग्य–

किसी समय मनोहर नामक उद्यान में भगवान नेमिनाथ तथा सत्यभामा आदि जलकेलि कर रहे थे। स्नान के अनंतर श्री नेमिनाथ ने सत्यभामा से कहा-हे नीलकमल के समान नेत्रों वाली! तू मेरा यह स्नान का वस्त्र ले। सत्यभामा ने कहा, मैं इसका क्या करूँ? नेमिनाथ ने कहा कि तू इसे धो डाल। तब सत्यभामा कहने लगी क्या आप श्रीकृष्ण हैं? वे श्रीकृष्ण, जिन्होंने कि नागशय्या पर चढ़कर शाङ्र्ग नाम का धनुष अनायास ही चढ़ा दिया था और दिग्दिगंत को व्याप्त करने वाला शंख पूरा था? क्या आप में यह साहस है? यदि नहीं तो आप मुझसे वस्त्र धोने की बात क्यों करते हैं?

नेमिनाथ ने कहा कि 'मैं यह कार्य अच्छी तरह कर दूँगा' इतना कहकर वे आयुधशाला में पहुँच गये। वहाँ नागराज के महामणियों से सुशोभित नागशय्या पर अपनी ही शय्या के समान चढ़ गये और शाङ्र्ग धनुष चढ़ाकर समस्त दिशाओं के अंतराल को रोकने वाला शंख फूंक दिया। उस समय श्रीकृष्ण अपनी कुसुमचित्रा सभा में विराजमान थे। वे सहसा ही यह आश्चर्यपूर्ण

काम सुनकर व्यग्र हो उठे। बड़े आश्चर्य से किंकरों से पूछा कि यह क्या है? किंकरों ने भी पता लगा कर सारी बात बता दी।

उस समय अर्धचक्री श्रीकृष्ण ने विचार करते हुये कहा कि आश्चर्य है, बहुत समय बाद कुमार नेमिनाथ का चित्त राग से युक्त हुआ है। अब इनका विवाह करना चाहिए। वे शीघ्र ही जूनागढ़ के राजा उग्रसेन के घर स्वयं पहुँच गये और रानी जयावती से उत्पन्न राजीमती कन्या की श्री नेमिनाथ के लिए याचना की। राजा उग्रसेन ने कहा हे देव! आप तीन खण्ड के स्वामी हैं अतः आपके सामने हम लोग कौन होते हैं? फिर भी नारायण के कहने पर शुभ मुहूर्त में विवाह निश्चित हो गया। अनंतर श्रीकृष्ण ने बड़े-बड़े शिकारियों द्वारा तमाम मृगों का समूह एक स्थान पर इकट्ठा करवा दिया और उसके चारों ओर बाड़ लगवा दी। उनके रक्षकों को नियुक्त कर दिया।

तदनंतर देवों द्वारा लाये गये नाना प्रकार के वस्त्राभूषणों से सुसज्जित भगवान नेमिनाथ, समान वय वाले अनेक मंडलेश्वर राजपुत्रों से घिरे हुये चित्रा नाम की पालकी पर आरूढ़ होकर दिशाओं का अवलोकन करने के लिए निकले। वहाँ उन्होंने करुण स्वर से चिल्लाते हुये और इधर-उधर दौड़ते हुए, भूख, प्यास से व्याकुल हुए तथा अत्यंत भयभीत हुए, दीनदृष्टि से युक्त मृगों को देख दयावश वहां के रक्षकों से पूछा कि यह पशु समूह क्यों इकट्ठा किया गया है? नौकरों ने कह दिया कि आपके विवाह में ये मारे जायेंगे। उसी समय श्री नेमिकुमार को पशुओं के प्रति अत्यधिक करुणा जाग्रत हो गई और शीघ्र ही भोगों से वैराग्य उत्पन्न हो गया। उन्होंने अपने अवधिज्ञान से श्रीकृष्ण के इस कार्य को जान लिया और विरक्त चित्त हुए लौटकर अपने घर वापस आ गये। अपने पूर्व भवों का स्मरण कर भयभीत हो गये। अब तक प्रभु के कुमार काल के तीन सौ वर्ष व्यतीत हो चुके थे।

तत्क्षण ही लौकांतिक देवों से पूजा को प्राप्त हुए प्रभु को देवों ने देवकुरु नाम की पालकी पर बिठाया और सहस्राम्र वन में ले गये। श्रावण कृष्णा षष्ठी के दिन सायंकाल के समय तेला का नियम लेकर एक हजार राजाओं के साथ जैनेश्वरी दीक्षा से विभूषित हो गये। उसी समय उन्हें चौथा मनःपर्ययज्ञान प्रगट हो गया।

राजीमती भी प्रभु के पीछे तपश्चरण के लिए चली गई सो ठीक ही है क्योंकि शरीर की बात तो दूर ही रही, वचनमात्र से भी दी हुई कुलस्त्रियों का यही न्याय है।

राजा वरदत्त ने पड़गाहन करके प्रभु नेमिनाथ महामुनिराज को प्रथम आहार दिया जिसके फलस्वरूप पंचाश्चर्य को प्राप्त हो गये अर्थात् देवों ने साढ़े बारह करोड़ रत्न वर्षाये, पुष्पवृष्टि, मन्द सुगन्ध वायु, दुन्दुभी बाजे और अहोदानम् आदि प्रशंसा वाक्य होने लगे।

इस प्रकार तपश्चर्या करते हुये प्रभु के छद्मस्थ अवस्था के छप्पन दिन व्यतीत हो गये तब वे रैवतक पर्वत पर पहुँचे, तेला का नियम लेकर किसी बड़े भारी बाँस वृक्ष के नीचे विराजमान हो गये। आश्विन कृष्णा प्रतिपदा के दिन चित्रा नक्षत्र में प्रातः काल के समय प्रभु को लोकालोकप्रकाशी केवलज्ञान प्रकट हो गया। उनके समवसरण में वरदत्त को आदि लेकर ग्यारह गणधर थे, अठारह हजार मुनि, राजीमती आदि चालीस हजार आर्यिकाएं, एक लाख श्रावक और तीन लाख श्राविकाएं थीं। भगवान की सभा में बलभद्र और श्रीकृष्ण जैसे महापुरुष आये। धर्म का स्वरूप सुना और अपने सभी भव-भवांतर पूछे।

किसी समय भगवान की दिव्यध्वनि से यह बात मालूम हुई कि 'द्वीपायन मुनि के क्रोध के निमित्त से द्वारावती नगरी का विनाश होगा' इस भावी दुर्घटना को सुनकर कितने ही महापुरुषों ने जैनेश्वरी दीक्षा ग्रहण कर ली थी। इस प्रकार प्रभु नेमिनाथ ने छह सौ निन्यानवे वर्ष, नौ महीना और चार दिन तक विहार किया था।

अनन्तर गिरनार पर्वत पर जाकर विहार छोड़कर पाँच सौ तेंतीस मुनियों के साथ एक महीने का योग निरोध करके आषाढ़ शुक्ला सप्तमी के दिन चित्रा नक्षत्र में रात्रि के प्रारम्भ में ही प्रभु ने अघातिया कर्मों का नाशकर मोक्षपद प्राप्त कर लिया। उसी समय इंद्रादि देवों ने आकर बड़ी भक्ति से प्रभु का परिनिर्वाण कल्याणक महोत्सव मनाया। वे श्री नेमिनाथ भगवान हमारे अंतःकरण को पूर्णशांति प्रदान करें। इसी भावना के साथ भगवान के श्रीचरणों में कोटि-कोटि नमन है।

तीर्थंकर नेमिनाथ जन्मभूमि

शौरीपुर तीर्थ का परिचय

–प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चंदनामती

जैनधर्म के बाइसवें तीर्थंकर भगवान नेमिनाथ की जन्मस्थली ''शौरीपुर'' उत्तर प्रदेश के आगरा जिले में है। यह तीर्थ यमुना तट पर बसा हुआ है। यह स्थल सिद्धक्षेत्र के रूप में प्रसिद्धि को प्राप्त हुआ है क्योंकि यहाँ से अनेक मुनियों ने निर्वाणधाम को प्राप्त किया था।

शौरीपुर में माता शिवादेवी और पिता समुद्रविजय से श्रावण शुक्ला षष्ठी में श्री नेमि जिनेन्द्र उत्पन्न हुए थे।

हरिवंशपुराण में भी कथन आया है–

जिनस्य नेमित्रिदिवावतारतः, पुरैव षण्मासपुरस्सरा सुरैः।
प्रवर्तिता तज्जननावधिगृहे, हिरण्यवृष्टिः पुरुहूतशासनात् ।।

अर्थ–भगवान् नेमिनाथ के स्वर्गावतार से छह माह पहले से लेकर जन्म पर्यंत पन्द्रह मास तक इन्द्र की आज्ञा से शौरीपुर निवासी राजा समुद्रविजय के घर देवों ने रत्नों की वर्षा की थी।

उपर्युक्त उल्लेखों से स्पष्ट है कि बाइसवें तीर्थंकर श्री नेमिनाथ ने शौरीपुर नगर में राजा समुद्रविजय के यहाँ जन्म लिया, इसके उपलक्ष्य में इन्द्रों और देवों ने भगवान के गर्भ और जन्मकल्याणकों का महान् उत्सव शौरीपुर में मनाया था। भगवान के इन दो कल्याणकों के कारण यहाँ की भूमि अत्यन्त पावन हो गई, जिससे आज इसे तीर्थ के रूप में माना जाता है।

भगवान के इन दो कल्याणकों के अतिरिक्त यहाँ पर कई अन्य मुनियों को केवलज्ञान और निर्वाणप्राप्ति के उल्लेख भी पौराणिक साहित्य में उपलब्ध होते हैं।

शौरीपुर में गन्धमादन नामक पर्वत पर रात्रि के समय सुप्रतिष्ठ नामक मुनिराज ध्यानमुद्रा में विराजमान थे। सुदर्शन नामक एक यक्ष ने पूर्व जन्म के विरोध के कारण मुनिराज पर घोर उपसर्ग किया। मुनिराज अविचल रहे, अनन्तर उन्हें केवलज्ञान की प्राप्ति हो गई।

हरिवंशपुराण में वर्णन आया है कि कुछ समय पश्चात् शौरीपुर नरेश

अन्धकवृष्टि और मथुरा नरेश भोजकवृष्टि ने इन्हीं केवली भगवान् के निकट मुनि दीक्षा ले ली।

इसी प्रकार से आराधना कथा कोष में एक कथा आई है–

अमलकण्ठपुर के राजा निष्ठसेन के पुत्र धन्य ने भगवान नेमिनाथ के उपदेश से मुनिदीक्षा धारण कर ली। एक दिन विहार करते हुए मुनि ''धन्य'' शौरीपुर पधारे, वहाँ यमुनातट पर वे ध्यानारूढ़ हो गये। शौरीपुर का राजा शिकार से लौटा, शिकार न मिलने के कारण वह मन में बड़ा खिन्न हो रहा था। मुनिराज को देखते ही उसे लगा कि हो न हो, इस नग्न मुनि के कारण ही मुझे सारे दिन भटकने पर भी शिकार नहीं मिल पाया। यह सोचकर अपने निराशाजनक क्रोध के कारण उस मूर्ख ने उन वीतराग मुनि को तीक्ष्ण बाणों से बींध दिया। मुनि धन्य शुक्ल ध्यान द्वारा कर्मों को नष्ट कर सिद्धपद को प्राप्त हुए। उस समय इन्द्रों ने उनका निर्वाण महोत्सव मनाया।

एक ''अलसत्कुमार'' नाम के मुनि ने भी शौरीपुर से मोक्षपद प्राप्त किया तथा भगवान महावीर के समय ''यम'' मुनिराज भी अन्तःकृत केवली होकर यहीं से मोक्ष गए हैं। यह स्थान दानी कर्ण की जन्मभूमि है। प्रसिद्ध दार्शनिक विद्वान् आचार्य प्रभाचन्द्र के गुरु आचार्य लोकचन्द्र यहीं हुए थे। आचार्य प्रभाचन्द्र ने जैन न्याय के सुप्रसिद्ध ग्रंथ प्रमेयकमल मार्तण्ड की रचना यहीं पर की थी इस प्रकार की अनुश्रुति है।

श्री शौरीपुर की प्राचीन समृद्धि निर्विवाद है। इतिहासरत्न डा. ज्योतिप्रसाद के अनुसार 19वीं सदी के पूर्वार्द्ध में कर्नल टॉड और उसी सदी के अन्तिम चरण में जनरल कनिंघम और उनके सहयोगी कार्लायल ने यहाँ के खण्डहरों का सर्वेक्षण किया था और सिद्ध किया था कि प्राचीन काल में यह नगरी अत्यन्त समृद्धिशाली थी। यहाँ पर अनेक बार हीरे के नग तथा ऐतिहासिक मुद्राएं आदि मिलने की बात सुनी व लिखी गई हैं। अनेक दिगम्बर जैन मूर्तियाँ और चिन्ह यहाँ प्राप्त हुए हैं। मध्यकाल में 19वीं सदी तक यहाँ दिगम्बर जैन भट्टारकों की गद्दी रही है। उनकी धार्मिक चर्चाओं और सिद्धियों से जनता बहुत प्रभावित थी।

मूलतः यह दिगम्बर जैन तीर्थ है। जितने प्राचीन मंदिर, मूर्तियाँ और चरण हैं सभी दिगम्बर परम्परा के हैं। आसपास के जैन स्त्री पुरुष यहाँ मुण्डन, कर्णबेधन आदि संस्कार कराने आते हैं। यह क्षेत्र मूल संघाम्नायी भट्टारकों का स्थान रहा है। भट्टारक जगतभूषण और विश्वभूषण की परम्परा में

अठारहवीं शताब्दी में जिनेन्द्र भूषण भट्टारक हुए हैं, ये मंत्रवेत्ता सिद्धपुरुष थे। इनके चमत्कारों के संबंध में अनेक किंवदन्तियाँ अब तक प्रचलित हैं। उन्होंने भिण्ड, ग्वालियर, आरा,पटना, सम्मेदशिखर, सोनागिरि, मसाड़ आदि कई स्थानों पर विशाल मंदिर तथा धर्मशालाएं बनवाईं, जो अब तक विद्यमान हैं।

वर्तमान में शौरीपुर और बटेश्वर दो अलग-अलग तीर्थ हैं। यह शौरीपुर से मात्र 3 किमी. दूर है तथा यहाँ ग्राम पंचायत का मुख्यालय है।

बटेश्वर के दिगम्बर जैन मंदिर के विषय में कहा जाता है कि जब शौरीपुर यमुना नदी के तट से अधिक कटने लगा और बीहड़ हो गया, तब उक्त भट्टारक जी ने बटेश्वर में विशाल मंदिर और धर्मशाला बनवाई। यह मंदिर महाराज बदनसिंह द्वारा निर्मापित घाट के ऊपर वि. सं.1838 में तीन मंजिल का बनवाया गया था। उसकी दो मंजिलें जमीन के नीचे हैं। इस मंदिर में महोबा से लाई हुई भगवान् अजितनाथ की पांच फुटी ऊँची कृष्ण पाषाण की सातिशय पद्मासन प्रतिमा विराजमान है। उसकी प्रतिष्ठा संवत् 1224 वैशाख वदी 7 सोमवार को परिमाल राज्य में आल्हा ऊदल के पिता जल्हड़ ने करायी थी।

यह जनश्रुति यहाँ की प्रसिद्ध है कि उपर्युक्त अजितनाथ की विशाल प्रतिमा जी महोबा से पालकी में विराजमान होकर आकाशमार्ग से बटेश्वर पधारी थीं। यहाँ अनेक प्राचीन मूर्तियाँ भी विराजमान हैं। इनमें भगवान् श्री शांतिनाथ की सं. 1150 (ई. 1093) की प्रतिष्ठित एक खड्गासन मूर्ति भी हैं, जिसकी छवि बड़ी मनोहारी है।

जैन मान्यतानुसार शौरीपुर का इतिहास महाभारत काल से भी कुछ पूर्व से प्रारंभ होता है। इस जैन मान्यता का समर्थन भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण विभाग की ओर से मार्च सन् 1972 में किये गये सर्वेक्षण से भी होता है जो कि श्री जगदीशसहाय निगम ने किया था। एक बार क्षेत्र कमेटी ने आदि मंदिर के दक्षिण की ओर एक टीले की खुदाई कराई थी, फलतः उसमें अनेक सांगोपांग तथा खण्डित जैन प्रतिमाएं निकली थीं।

वर्तमान में यहाँ आगरा के सक्रिय कार्यकर्ताओं द्वारा क्षेत्र के जीर्णोद्धार एवं विकास की अच्छी योजनाएं चल रही हैं। मार्च 2002 में पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी का संघ सहित इस तीर्थ पर मंगल पदार्पण हुआ, उस समय उन्होंने कमेटी के लोगों को शौरीपुर तीर्थ विकास की सुन्दर रूपरेखा बताई थी।

भगवान नेमिनाथ की जन्मभूमि इस पावन तीर्थ शौरीपुर को शत शत नमन।

श्री गिरनार जी तीर्थक्षेत्र का परिचय

लेखक–पीठाधीश स्वस्ति श्री रवीन्द्र कीर्ति स्वामी

गुजरात प्रान्त में स्थित गिरनार पर्वत एक निर्वाणक्षेत्र के रूप में सुप्रसिद्ध तीर्थ है। षट्खण्डागम सिद्धान्तशास्त्र की आचार्य वीरसेन कृत धवला टीका में इसे क्षेत्र मंगल माना है। इसे ऊर्जयन्त गिरि भी कहते हैं। आचार्य यतिवृषभ ने भी तिलोयपण्णत्ति नामक ग्रंथ में इसी आशय की पुष्टि करते हुए इसे क्षेत्र मंगल माना है।

ऊर्जयन्त क्षेत्र पर बाईसवें तीर्थंकर नेमिनाथ के तीन कल्याणक हुए थे- दीक्षा, केवलज्ञान और निर्वाण। जिस क्षेत्र पर किसी तीर्थंकर का एक ही कल्याणक हो वह कल्याणक क्षेत्र या तीर्थक्षेत्र कहलाता है और जहाँ किसी तीर्थंकर के तीन कल्याणक हुए हों वह क्षेत्र तो वस्तुतः अत्यन्त पवित्र बन जाता है अतः गिरनार क्षेत्र अत्यन्त पावन तीर्थभूमि है। भगवान नेमिनाथ का निर्वाणस्थल होने से इसे सिद्धक्षेत्र कहा जाता है।

गिरनार पर्वत का नाम लेते ही महासती राजुल का नाम भी स्मृति में आ जाता है जब भगवान नेमिनाथ जूनागढ़ से गिरनार की ओर राजुलमती से ब्याह करने के लिए चले तो वहाँ पहुँचते हुए मार्ग में बाड़े में बंद पशुओं की करुण चीत्कार ने उन्हें द्रवित कर दिया तब वे वैराग्य उत्पन्न हो जाने से विवाह बंधन में न फंसकर गिरनार पर्वत पर जाकर दीक्षा ले घोर तपश्चरण में लीन हो गए तब महासती राजुल ने भी भगवान नेमिनाथ के पथ का अनुसरण करते हुए आर्यिका दीक्षा ग्रहण कर इसी पर्वत पर घोर तपश्चरण किया था। इसी पर्वत पर भगवान नेमिनाथ के तीन कल्याणकों का वर्णन तिलोयपण्णत्ति नामक ग्रंथ में विस्तारपूर्वक दिया गया है। भगवान के निर्वाण की तिथि आदि का उल्लेख करते हुए उन्होंने लिखा है–

बहुलट्ठमी पदोसे आसाढ़े जम्मभम्मि उज्जंते।
छत्तीसाधिय पणसयसहिदो णेमीसरो सिद्धो।।

अर्थात् भगवान नेमीश्वर आषाढ़ कृष्णा अष्टमी के दिन प्रदोषकाल में अपने जन्म नक्षत्र के रहते 536 मुनियों के साथ ऊर्जयन्त गिरि से सिद्ध हुए।

भगवान का निर्वाण होने पर असंख्य देवों, इन्द्रों और मनुष्यों ने

निर्वाणकल्याणक महोत्सव मनाया। तब से इस पर्वत की ख्याति एक प्रसिद्ध सिद्धक्षेत्र के रूप में हो गई है।

इस क्षेत्र पर भगवान नेमिनाथ के अतिरिक्त प्रद्युम्न, शम्बुकुमार, अनिरुद्ध कुमार आदि 72 करोड़ 700 मुनियों ने ऊर्जयन्त गिरि से सिद्धिपद प्राप्त किया। ऊर्जयन्त गिरि से अनेक मुनि मोक्ष गए हैं इसका समर्थन हरिवंशपुराण से भी होता है। इस संबंध में आचार्य जिनसेन ने मुनियों के कुछ नाम देकर यह भी सूचित किया है कि इन मुनियों आदि के निर्वाण के कारण ही ऊर्जयन्त को निर्वाण क्षेत्र माना जाने लगा और अनेक भव्यजन तीर्थयात्रा के लिए आने लगे। आचार्य गुणभद्रकृत उत्तरपुराण में प्रद्युम्न आदि मुनियों के संबंध में ऊर्जयन्त गिरि से निर्वाणप्राप्ति के साथ जिन कूटों से उन्होंने निर्वाण प्राप्त किया था उसकी भी सूचना दी गई हैं।

इसी पर्वत से गजकुमार मुनि ने निर्वाण की प्राप्ति की। हरिवंशपुराण में वर्णित कथा में गजकुमार मुनि के मुक्तिस्थान का उल्लेख नहीं किया गया किन्तु हरिषेणकृत बृहत्कथाकोष में स्थान का स्पष्ट उल्लेख मिलता है। इस प्रकार गिरनार पर्वत से करोड़ों मुनियों को निर्वाण प्राप्त हुआ अतः वह निर्वाणक्षेत्र या सिद्धक्षेत्र है।

भगवान नेमिनाथ जिस स्थान से मुक्त हुए थे वह स्थान अत्यन्त पवित्र और लोकपूज्य था। उस स्थान के गौरव को सदाकाल के लिए अक्षुण्ण बनाए रखने के लिए इन्द्र ने वज्र से सिद्धशिला का निर्माण किया और उस पर भगवान के चरण चिन्ह उत्कीर्ण किए। इस आशय की सूचना आचार्य जिनसेन ने 'हरिवंशपुराण' (सर्ग 65, श्लोक 14) में दी है। उन्होंने लिखा है–

'ऊर्जयन्तगिरौ वज्री वज्रेणालिख्य पाविनीम्।
लोके सिद्धिशिलां चक्रे जिनलक्षणपङ्क्तिभिः।।''

इसके अतिरिक्त आचार्य दामनन्दी कृत पुराणसारसंग्रह एवं आचार्य समन्तभद्र स्वामी रचित स्वयम्भूस्तोत्र में इस बात का उल्लेख किया गया है।

इन्द्र ने जिस प्रकार भक्तिवश वज्र से भगवान के चिन्ह अंकित किए थे उसी प्रकार उसने भक्तिवश गिरनार पर्वत पर भगवान नेमिनाथ की भव्य मूर्ति भी स्थापित की थी जिसका वर्णन आचार्य मदनकीर्ति यतिपति ने 'शासन चतुस्त्रिंशतिका'' में किया है। इन्द्र द्वारा स्थापित उस मूर्ति का क्या हुआ, इसका कुछ पता नहीं

चलता किन्तु श्वेताम्बर आचार्य राजशेखरसूरिकृत 'प्रबन्धकोष' (वि.सं. 1405) में रत्नश्रावक संबंधी एक प्रबंध में काश्मीर देश के नवहुल्ल पत्तन निवासी रत्न नामक जैन श्रीमंत द्वारा संघ सहित यात्रा करने का वर्णन आता है जिन्होंने नेमिनाथ भगवान की अति प्राचीन मूर्ति के दर्शन के साथ उनका जलाभिषेक किया। प्रतिमा लेप की होने से वह गल गई जिससे उन्हें बड़ा पश्चाताप हुआ, उन्होंने उपवास किया। तब रात्रि में अम्बिका देवी ने प्रकट होकर उन्हें अन्य प्रतिमा स्थापित करने का आदेश दिया तदनुरूप रत्नश्रावक ने 18 सोने की, 18 चांदी की और 18 पाषाण की प्रतिमाएं बनवाईं। यदि इस प्रकरण को प्रामाणिक स्वीकार किया जाए तो मदनकीर्ति (वि.स.1285) ने नेमिनाथ की जिस भव्य दिगम्बर मूर्ति का उल्लेख किया है वह वि.सं. 1405 में लिखित 'प्रबंधकोष' के अनुसार रत्न नामक यात्री के हाथों नष्ट हुई। इससे लगता है कि मदनकीर्ति के द्वारा उल्लिखित मूर्ति वि.सं. की 14-15 वीं शताब्दी तक अवश्य विद्यमान थी। संभव है, मदनकीर्ति ने उसके दर्शन भी किए हों किन्तु इतना तो निश्चित है ही कि वह मूर्ति दिगम्बर थी और अत्यन्त आकर्षक थी।

गिरनार के दूसरे शिखर पर अम्बा या अम्बिका देवी का मंदिर है। इस मंदिर की मान्यता जैनों और हिन्दुओं दोनों में ही है। मंदिर पर आजकल हिन्दुओं का अधिकार है। The Report on the Antiquities of Kathiawad and Kachha, P. 129 में Mr. Burgess ने मूलतः इस मंदिर को जैनों का बताया है। अम्बिका देवी के कई नाम जैन शास्त्रों में मिलते हैं-कूष्माण्डी, कूष्माण्डिनी, आम्रा देवी, अम्बा देवी, अम्बिका देवी। यह देवी तीर्थंकर नेमिनाथ की शासन देवी कहलाती हैं। आचार्य जिनसेन ने 'हरिवंशपुराण' (सर्ग 66, श्लोक 44) में गिरनार की अम्बिका देवी के संबंध में विशेष उल्लेख किया है। अम्बिका देवी की मूर्तियाँ बहुसख्या में प्राप्त होती हैं। इस देवी का मुख्य चिन्ह यह है-सिंहारूढ़ देवी की गोद में एक बालक होता है तथा एक बालक बगल में खड़ा होता है। देवी आम्रवृक्ष के नीचे बैठी होती है अथवा वृक्ष नहीं होता तो हाथ में आम्रस्तवक रहता है। देवी के शिरोभाग पर भगवान नेमिनाथ की पद्मासन प्रतिमा बनी होती है।

गिरनार पर अनेक पौराणिक और ऐतिहासिक घटनाएं घटित हुई हैं, जिनका विशेष महत्व है। चतुर्थ श्रुतकेवली गोवर्धनाचार्य गिरनार की यात्रा के

लिए गए थे। अंतिम श्रुतकेवली भद्रबाहु ने भी यहाँ की यात्रा की थी। इनके पश्चात् एक महत्वपूर्ण घटना का गिरनार के साथ संबंध है, जिसके द्वारा जैन वाङ्मय का इतिहास जुड़ा हुआ है। वह घटना इस प्रकार है–

गिरनार की चन्द्रगुफा में स्थित धरसेनाचार्य नन्दिसंघ की प्राकृत 'पट्टावली' के अनुसार आचारांग के पूर्ण ज्ञाता थे। उन्हें इस बात की चिंता हुई कि उनके पश्चात् श्रुतज्ञान का लोप हो जाएगा, उस समय महिमानगरी में मुनि सम्मेलन हो रहा था। उन्होंने मुनि सम्मेलन को अपनी चिन्ता व्यक्त करते हुए एक पत्र लिखा फलस्वरूप व्युत्पन्न और विनयी दो मुनि पुष्पदंत और भूतबलि विद्या ग्रहण हेतु उनके पास पहुँचे, तब आचार्यश्री ने उनकी परीक्षा लेकर उन्हें सिद्धान्त सीखने योग्य समझकर ग्रंथ पढ़ा दिया जिसके फलस्वरूप षट्खण्डागम नामक महान ग्रंथ की रचना हुई, इस प्रकार सिद्धान्त ग्रंथों की विद्याभूमि गिरनार ही है। पुष्पदंत और भूतबलि ने गिरनार की सिद्धशिला पर बैठकर, जहाँ भगवान नेमिनाथ को मुक्ति प्राप्त हुई थी, मंत्र सिद्धि की थी। आचार्य कुन्दकुन्द भी गिरनार की वंदना करने आए थे ऐसा वर्णन ज्ञान प्रबोध एवं पाण्डवपुराण ग्रंथ में आता है।

इसके अतिरिक्त सुगंधदशमी व्रत का कथानक भी यहीं से जुड़ा है।

ऊर्जयन्त पर्वत दिगम्बर परम्परा में तीर्थराज माना गया है। अनन्तानंत तीर्थंकरों एवं मुनियों की निर्वाणभूमि होने से जहाँ सम्मेदशिखर को तीर्थाधिराज की संज्ञा दी गई है वहीं ऊर्जयन्तगिरि से 72 करोड़ 700 मुनियों की मुक्ति और तीर्थंकर नेमिनाथ के तीन कल्याणक होने से सम्मेदशिखर के बाद इस तीर्थ का नाम आता है।

श्री दिगम्बर जैन सिद्धक्षेत्र गिरनार पर्वत के ऊपर पाँच टोंके हैं। लगभग दो मील की चढ़ाई चढ़ने पर दिगम्बर मंदिर और धर्मशाला से कुछ पहले राजुल गुफा है। इस गुफा से आगे बढ़ने पर दिगम्बर जैन धर्मशाला है इसके आगे अहाते में 3 मंदिर और एक छतरी है। एक मन्दरिया में 4 फुट ऊँची खड्गासन भगवान बाहुबली की प्रतिमा है। पार्श्व में एक छतरी में कुन्दकुन्दाचार्य के चरण हैं, सामने दीवार में पंचपरमेष्ठी की 5 मूर्तियाँ बनी हैं। छतरी के पार्श्व में एक जिनमंदिर है। अहाते के प्रांगण में बड़ा मंदिर बना हुआ है। दिगम्बर मंदिर से थोड़ा आगे बढ़ने पर गोमुखी गंगा है, एक गोमुख से जलधारा निकलते रहने से जल से कई कुण्ड

बन गए हैं। गोमुख के पृष्ठ भाग में एक वेदी पर तीर्थंकरों के 24 चरणचिन्ह बने हुए हैं। यह प्रथम टोंक कहलाती है। इस पवित्र कल्याणक स्थान पर हिन्दुओं ने अधिकार कर रखा है। इस गोमुख गंगा के निकट ही सहस्राम्रवन (भगवान नेमिनाथ की दीक्षा भूमि) को मार्ग जाता है। यहाँ से कुछ आगे चलने पर राखंगार के दुर्ग का द्वार मिलता है। द्वार के बायीं ओर नेमिनाथ का विशाल और दर्शनीय मंदिर है जो कि मूलतः दिगम्बर आम्नाय का था किन्तु अब उस पर श्वेताम्बरों का अधिकार है। 900 सीढ़ी चढ़कर द्वितीय टोंक है जहाँ अनिरुद्ध कुमार के चरण हैं, इसके निकट ही अम्बा देवी का विशाल मंदिर है। तीसरी टोंक शम्बुकुमार की है। तीसरी टोंक से 1500 सीढ़ियाँ चढ़ने और उतरने पर चौथा टोंक है। इस पर्वत पर चढ़ने के लिए सीढ़ियाँ नहीं हैं, खड़ा पहाड़ है। चढ़ाई कठिन है किन्तु यात्री साहस व परिश्रम से थोड़ा कष्ट सहकर चढ़ सकते हैं। पर्वत की चोटी पर शिला में प्रद्युम्न कुमार के चरण बने हैं, चरणों के निकट ही एक फुट ऊँची मूर्ति बनी हुई है। पाँचवी टोंक पर भगवान नेमिनाथ के चरण हैं जिन्हें हिन्दू लोग दत्तात्रय कहते हैं, चरणों के पीछे भगवान नेमिनाथ की भव्य दिगम्बर प्रतिमा विराजमान हैं, यह पाँचों टोंक व नेमिनाथ मंदिर सरकार के पुरातत्त्व विभाग के अधिकार में है।

यहाँ से गये हुए मार्ग से ही वापस लौटकर सहस्राम्रवन (प्रथम टोंक) के लिए सीढ़ियाँ जाती हैं। इस दीक्षावन में एक छतरी के नीचे चरण बने हैं, यहाँ से कच्चा मार्ग धर्मशाला के लिए जाता है जो कि कष्टकर है अतः सीढ़ियों द्वारा ही मुख्य मार्ग से नीचे आना चाहिए।

नीचे तलहटी में दिगम्बर जैन धर्मशाला में एक जिनालय है, धर्मशाला में अनेक कमरे हैं और यात्रियों की सुविधा हेतु समुचित व्यवस्था है। आचार्यश्री निर्मलसागर महाराज की प्रेरणा से गिरनार तीर्थ का विकास हुआ है। पहाड़ के ऊपर प्रथम टोंक पर बनी धर्मशाला में कमरे हैं। इसी प्रकार जूनागढ़ में भी ऊपर कोट के निकट क्षेत्र की एक धर्मशाला है इसमें भी यात्री हेतु सभी सुविधाएं हैं। क्षेत्र कार्यालय जूनागढ़ के जगमाल चौक में है। इस प्रकार भगवान नेमिनाथ की त्रयकल्याणक भूमि व अनेक मुनियों की सिद्धभूमि सभी के लिए कल्याणकारी होवे यही भावना है।

श्री अरिष्टनेमितीर्थंकर विधान

मंगलाचरण

सिद्धान् भूम्यष्टमीप्राप्तान्, अष्टगुणसमन्वितान्।
अष्टांगेन नुमो नित्य-मष्टकर्मविमुक्तये।।1।।

श्रीमदरिष्टनेमीशं, वन्दे भक्त्या शिवाप्तये।
शिवादेवीसुतं पूज्यं, समुद्रविजयात्मजम्।।2।।

–उपेंद्रवज्रा छंद–

जंतून् विलोक्यांशु दयां चकार, राजीमतीं सर्वपरिग्रहं च।
त्यक्त्वागृहीत् धर्मधुरां सुदीक्षां, तं नेमिनाथं शिरसा नमामि।।3।।

श्री नेमिनाथ स्तोत्र

–शंभुछंद–

भव वन में भ्रमते-भ्रमते अब, मुझको कथमपि विज्ञान मिला।
हे नेमि प्रभो! अब नियम बिना, नहिं जाने पावे एक कला।।
मैं निज से पर को पृथक् करूँ, निज समरस में ही रम जाऊँ।
मैं मोह ध्वांत को नाश करूँ, निज ज्ञान सूर्य को प्रकटाऊँ।।1।।

शौरीपुर में प्रभु जन्में तक, रत्नों की वर्षा खूब हुई।
धन धन्य समुद्रविजय राजा, कृतकृत्य शिवादेवी भी थी।।
कार्तिक सुदि छठ के गर्भागम, श्रावण सुदि छट्ठ जन्म लीना।
यौवन में राजमती के संग, परिजन ने ब्याह रचा दीना।।2।।

पशु बंधन को देखा प्रभु ने, तत्क्षण सब बंधन तोड़ दिया।
राजीमति मोह परिग्रह तज, तपश्री से नाता जोड़ लिया।।
श्रावण सुदि छट्ठ सुखद प्यारी, सिरसा वन में जा ध्यान धरा।
आश्विन सुदि एकम आते ही, कैवल्य श्री ने आन वरा।।3।।

तब राजमती भी दीक्षा ले, आर्या में गणिनी मान्य हुई।
प्रभु ने शिव का पथ दर्शाया, धर्मामृत वर्षा खूब हुई।।
तनु चालिस हाथ प्रमाण कहा, प्रभु आयू एक हजार वर्ष।
वैडूर्य[1] मणी सम कांति अहो, प्रभु शंख चिन्ह से हैं चिह्नित।।4।।

प्रभु समवसरण में कमलासन, पर चतुरंगुल से अधर रहें।
चउदिश में प्रभु का मुख दीखे, अतएव चतुर्मुख ब्रह्मा हैं।।
प्रभु के विहार में चरण कमल, तल स्वर्ण कमल खिलते जाते।
बहु कोसों तक दुर्भिक्ष टले, षट् ऋतुज फूल फल खिल जाते।।5।।

तरुवर अशोक था शोक रहित, सिंहासन रत्न खचित सुन्दर।
छत्रत्रय मुक्ताफल लंबित, भामंडल भवदर्शी मनहर।।
सुरदुंदुभि बाजे बाज रहें, ढुरते हैं चौंसठ श्वेत चमर।
सुर पुष्पवृष्टि नभ से बरसे, दिव्यध्वनि फैले योजन भर।।6।।

आषाढ़ सुदी सप्तमि तिथि थी, प्रभु ऊर्जयंत से सिद्ध हुए।
श्रीकृष्ण तथा बलदेव आदि, तुम पूजें ध्यावें भक्ति लिए।।
हे भगवन् ! तुम बाह्याभ्यंतर, अनुपम लक्ष्मी के स्वामी हो।
दो मुझे अनंतचतुष्टय श्री, 'सज्ज्ञानमती' सिद्धिप्रिय जो।।7।।

अथ जिनयज्ञप्रतिज्ञापनाय मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

1. नीलमणि।

पूजा नं. १
श्री अर्हंत पूजा

स्थापना–गीता छंद

अरिहंत प्रभु ने घातिया को घात निज सुख पा लिया।
छ्यालीस गुण के नाथ अठरह दोष का सब क्षय किया।।
शत इंद्र नित पूजें उन्हें गणधर मुनी वंदन करें।
हम भी प्रभो! तुम अर्चना के हेतु अभिनन्दन करें।।1।।

ॐ ह्रीं अर्हन् नमः हे अर्हत्परमेष्ठिन्! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं अर्हन् नमः हे अर्हत्परमेष्ठिन्! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं अर्हन् नमः हे अर्हत्परमेष्ठिन्! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

–बसन्ततिलका छंद–

श्रीमज्जिनेंद्र पद में जलधार देऊं।
आतंक पंक जग का सब दूर होवे।।
इच्छानुसार फलदायक कल्पतरू ये।
पूजा जिनेन्द्रप्रभु की त्रय ताप नाशे।।1।।

ॐ ह्रीं अर्हन् नमः परमेष्ठिभ्यः स्वाहा। (जलं निर्वपामीति स्वाहा।)

काश्मीरि केशर सुचंदन को घिसाऊँ।
चर्चूं जिनेन्द्र पदपंकज में रुची से।।
संसार के सकल ताप विनाश करती।
पूजा जिनेन्द्र प्रभु की सब सौख्य देती।।2।।

ॐ ह्रीं अर्हन् नमः परमात्मकेभ्यः चंदनं ... ।

जो कुंदपुष्प कलियों सम दीखते हैं।
धोये सु तंदुल लिये भर थाल में हैं।।
अर्हंत सन्मुख रखूँ बहु पुंज नीके।
पाथेय मोक्षपथ में जन के लिये हो।।3।।

ॐ ह्रीं अर्हन् नमः अनादिनिधनेभ्यः अक्षतं ... ।

मल्ली गुलाब वर पुष्प सुगंधि करते।
अर्हंत के चरण में रुचि से चढ़ाऊँ।।
पापान्धकूप मधि डूब रहे जनों को।
उद्धार हेतु जिनपूजन ही जगत् में।।4।।

ॐ ह्रीं अर्हन् नमः सर्वनृसुरासुरपूजितेभ्यः पुष्पं ... ।

शालीय ओदन सुगंधित भोज्यवस्तु।
पीयूष तुल्य चरू लेकर थाल भरके।।
अर्हंत सन्मुख चढ़ा क्षुध व्याधि नाशूँ।
तृप्ती अनंत जिनपूजन से मिलेगी।।5।।

ॐ ह्रीं अर्हन् नमः अनंतज्ञानेभ्यः नैवेद्यं ... ।

जो चित्त का तमसमूह विनाश करके।
त्रैलोक्यगेह वर दीपक दीप ज्योति।।
ले दीप आरति करूँ वरज्ञानज्योति।
पाऊँ अनंत निजज्ञान विकास करके।।6।।

ॐ ह्रीं अर्हन् नमः अनंतदर्शनेभ्यः दीपं ... ।

जो धूप सुन्दर सुगंध बिखेरती है।
अग्नि विषे जलत धूम्र उड़ावती है।।
खेऊँ दशांगवर धूप जिनेन्द्र आगे।
संपूर्ण पाप जलते वर सौख्य होगा।।7।।

ॐ ह्रीं अर्हन् नमः अनंतवीर्येभ्यः धूपं ... ।

ये कल्पवृक्ष फल सम अति मिष्ट ताजे।
अमृत समान रस से परिपूर्ण दीखें।।
पूजा करूँ फल चढ़ाकर आपकी मैं।
स्वात्मैक सिद्धि फल प्राप्त करूँ इसी से।।8।।

ॐ ह्रीं अर्हन् नमः अनंतसौख्येभ्यः फलं ... ।

नीरादि आठ वर द्रव्य संजोय करके।
घंटा ध्वजा चंवर छत्र सुदर्पणादी।।

मांगल्य द्रव्य शुभ लेकर पूजते ही।
संपूर्ण मंगल मिले निज सौख्य पाऊँ।।9।।

ॐ ह्रीं अर्हन् नमः परममंगलेभ्यः अर्घ्यं ... ।

श्रीपूज्यपाद जिन के चरणाब्ज नमते।
संपूर्ण इंद्र शिर से अतिभक्ति भावे।।
श्री पूज्य के पदनिकट जलधार देते।
हो शांति लोक त्रय में मुझ भक्त को भी।।10।।

ॐ ह्रीं अर्हन् नमः स्वस्ति भद्रं भवतु जगतां शांतये शांतिधारां निष्पादयामि शांतिकृद्भ्यः स्वाहा।

(शांतिधारा करें)

जो इन्द्र भक्ति वश नेत्र हजार करके।
बाहू हजार कर तांडव नृत्य करता।।
ऐसे जिनेन्द्रपद पुष्प चढ़ाय करके।
पूजा त्रिकाल कर अनुपम सौख्य पाऊँ।।11।।

ॐ ह्रीं अर्हन् नमः ध्यातृभिः अभीप्सितफलेभ्यः स्वाहा।

(पुष्पांजलि चढ़ावें)

जाप्य मंत्र–ॐ ह्रीं अर्हं अर्हत्परमेष्ठिभ्यो नमः।

जयमाला

–दोहा–

श्री अरिहंत जिनेन्द्र का, धरूँ हृदय में ध्यान।
गाऊँ गुणमणिमालिका, हरूँ सकल अपध्यान।।1।।

–शम्भु छंद–

जय जय प्रभु तीर्थंकर जिनवर, तुम समवसरण में राज रहे।
जय जय अर्हंत् लक्ष्मी पाकर, निज आत्मा में ही आप रहे।।
जन्मत ही दश अतिशय होते, तन में न पसेव न मल आदी।
पयसम सित रुधिर सु समचतुष्क, संस्थान संहनन है आदी।।1।।

अतिशय सुरूप, सुरभित तनु हैं, शुभ लक्षण सहस आठ सोहें।
अतुलित बल प्रियहित वचन प्रभो, ये दश अतिशय जन मन मोहें।।
केवल रवि प्रगटित होते ही, दश अतिशय अद्भुत ही मानों।
चारों दिश इक-इक योजन तक, सुभिक्ष रहे यह सरधानो।।2।।

हो गगन गमन, नहिं प्राणीवध, नहिं भोजन नहिं उपसर्ग तुम्हें।
चउमुख दीखें सब विद्यापति, नहिं छाया नहिं टिमकार तुम्हें।।
नहिं नख औ केश बढ़े प्रभु के, ये दश अतिशय सुखकारी हैं।
सुरकृत चौदह अतिशय मनहर, जो भव्यों को हितकारी हैं।।3।।

सर्वार्ध मागधीया भाषा, सब प्राणी मैत्री भाव धरें।
सब ऋतु के फल औ फूल खिलें, दर्पणवत् भूरत्नाभ धरें।।
अनुकूल सुगंधित पवन चले, सब जन मन परमानंद भरें।
रजकंटक विरहित भूमि स्वच्छ, गंधोदक वृष्टी देव करें।।4।।

प्रभु पद तल कमल खिलें सुन्दर, शाली आदिक बहु धान्य फलें।
निर्मल आकाश दिशा निर्मल, सुरगण मिल जय जयकार करें।।
अरिहंत देव का श्रीविहार, वर धर्मचक्र चलता आगे।
वसु मंगलद्रव्य रहें आगे, यह विभव मिला जग के त्यागे।।5।।

तरुवर अशोक सुरपुष्पवृष्टि, दिव्यध्वनि, चौंसठ चमर कहें।
सिंहासन भामंडल सुरकृत, दुंदुभि छत्रत्रय शोभ रहें।।
ये प्रातिहार्य हैं आठ कहे, औ दर्शन ज्ञान सौख्य वीरज।
ये चार अनंत चतुष्टय हैं, सब मिलकर छ्यालिस गुण कीरत।।6।।

क्षुध तृषा जन्म मरणादि दोष, अठदश विरहित निर्दोष हुए।
चऊ घाति घात नवलब्धि पाय, सर्वज्ञ प्रभु सुखपोष हुए।।
द्वादशगण के भवि असंख्यात, तुम धुनि सुन हर्षित होते हैं।
सम्यक्त्व सलिल को पाकर के, भव भव के कलिमल धोते हैं।।7।।

मैं भी भवदुःख से घबड़ा कर, अब आप शरण में आया हूँ।
सम्यक्त्व रतन नहिं लुट जावे, बस यही प्रार्थना लाया हूँ।।
संयम की हो पूर्ती भगवन्! औ मरण समाधी पूर्वक हो।
हो केवल 'ज्ञानमती' सिद्धी, जो सर्व गुणों की पूरक हो।।8।।

ॐ ह्रीं णमो अरिहंताणं अर्हत्परमेष्ठिभ्यः जयमाला महार्घ्यं....।

शांतये शांतिधारा, पुष्पांजलिः।

–दोहा –

मोह अरी को हन हुए, त्रिभुवन पूजा योग्य।
नमो नमो अरिहंत को, पाऊँ सौख्य मनोज्ञ।।1।।

।। इत्याशीर्वादः।।

पूजा नं. २

श्री अरिष्टनेमितीर्थंकर पूजा

–अथ स्थापना –

(तर्ज –करो कल्याण आतम का.....)

नमन श्री नेमि जिनवर को, बालयति स्वात्मनिधि पायी।
तजी राजीमती कांता, तपो लक्ष्मी हृदय भायी।।
करूँ आह्वान हे भगवन्! पधारो मुझ मनोम्बुज में।
करूँ मैं अर्चना रुचि से, अहो उत्तम घड़ी आई।।1।।
नमन श्री...।।टेक.।।

ॐ ह्रीं श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकर! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकर! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकर! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

–अथ अष्टक –

(तर्ज –ऐ माँ तेरी सूरत से अलग भगवान की सूरत क्या होगी.....)

हे नेमिनाथ! तुम भक्ती से, निज शक्ति बढ़ाने आये हैं।
भगवान -2 तुम्हारे चरणों की, हम पूजा करने आये हैं।।टेक.।।
भव भव में नीर पिया, नहिं प्यास बुझा पाये।
तुम पद धारा देने, पद्माकर जल लाये।।
निज का अघमल धोने के लिए, जलधारा करने आये हैं।।
भगवान.।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

हे नेमिनाथ! तुम भक्ती से, निज शक्ति बढ़ाने आये हैं।
भगवान-2 तुम्हारे चरणों की, हम पूजा करने आये हैं।।
चंदन चंदा किरणें, नहिं शीतल कर सकते।

तुम पद अर्चा करने, केशर चंदन घिसके।।
तनु ताप शांत हेतू चंदन, चरणों में चढ़ाने आये हैं।।
भगवान.।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

हे नेमिनाथ तुम भक्ती से, निज शक्ति बढ़ाने आये हैं।
भगवान-2 तुम्हारे चरणों की, हम पूजा करने आये हैं।।
निज सुख के खंड हुए, नहिं अक्षय पद पाये।
सित अक्षत ले करके, तुम पास प्रभो! आये।।
अविनश्वर सुख पाने के लिए, सित पुंज चढ़ाने आये हैं।।
भगवान.।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

हे नेमिनाथ! तुम भक्ती से, निज शक्ति बढ़ाने आए हैं।
भगवान-2 तुम्हारे चरणों की, हम पूजा करने आये हैं।।
हे नाथ! कामरिपु ने, त्रिभुवन को वश्य किया।
इससे बचने हेतू, बहु सुरभित पुष्प लिया।।
निज आत्म गुणों की सुरभि हेतु, ये पुष्प चढ़ाने आये हैं।।
भगवान.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय कामबाणविनाशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

हे नेमिनाथ! तुम भक्ती से, निज शक्ति बढ़ाने आए हैं।
भगवान-2 तुम्हारे चरणों की, हम पूजा करने आये हैं।।
बहुविध पकवान चखे, नहिं भूख मिटा पाये।
इस हेतू चरु लेकर, तुम निकट प्रभो! आये।।
निज आत्मा की तृप्ती के लिए, नैवेद्य चढ़ाने आये हैं।।
भगवान.।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हे नेमिनाथ! तुम भक्ती से, निज शक्ति बढ़ाने आए हैं।
भगवान-2 तुम्हारे चरणों की, हम पूजा करने आये हैं।।
निज मन में अंधेरा है, अज्ञान तिमिर छाया।

इस हेतू दीपक ले, प्रभु पास अभी आया।।
निज ज्ञानज्योति पाने के लिए, हम आरति करने आये हैं।।
भगवान.।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

हे नेमिनाथ! तुम भक्ती से, निज शक्ति बढ़ाने आए हैं।
भगवान-2 तुम्हारे चरणों की, हम पूजा करने आये हैं।।
कर्मों ने दुःख दिया, तुम कर्मरहित स्वामी।
अतएव धूप लेके, हम आये जगनामी।।
सब अशुभकर्म के भस्महेतु, हम धूप जलाने आये हैं।।
भगवान.।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

हे नेमिनाथ! तुम भक्ती से, निज शक्ति बढ़ाने आए हैं।
भगवान-2 तुम्हारे चरणों की, हम पूजा करने आये हैं।।
बहुविध के फल खाये, नहिं रसना तृप्त हुई।
ताजे फल ले करके, प्रभु पूजूँ बुद्धि हुई।।
इच्छाओं की पूर्ती के लिए, फल अर्पण करने आये हैं।।
भगवान.।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

हे नेमिनाथ! तुम भक्ती से, निज शक्ति बढ़ाने आए हैं।
भगवान-2 तुम्हारे चरणों की, हम पूजा करने आये हैं।।
प्रभु तुम गुण की अर्चा, भवतारन हारी है।
भवदधि में डूबे को, अवलंबनकारी है।।
निज ''ज्ञानमती'' पूर्ती के लिए, हम अर्घ्य चढ़ाने आये हैं।।
भगवान.।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–शेर छंद –

यमुना नदी का नीर, स्वर्णभृंग में भरूँ।
श्रीनेमिनाथ के चरण में, धार मैं करूँ।।

चउसंघ में सब लोक में भि शांति कीजिए।
बस ये ही एक याचना प्रभु पूर्ण कीजिए।।10।।

शांतये शांतिधारा।

हे नेमि! नीलकमल आप चिन्ह शोभता।
ये सुरभि पुष्प भी तो घ्राण नयन मोहता।।
प्रभु पाद कमल में अभी पुष्पांजलि करूँ।
सब रोग शोक दूर हों निज संपदा भरूँ।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।।

अथ पंचकल्याणक अर्घ्य

आवो हम सब करें अर्चना, प्रभु के पंचकल्याण की।
इन्द्र सभी मिल भक्ती करते, तीर्थंकर भगवान की।।
वन्दे जिनवरम्-4।।

श्रीसमुद्रविजय शौरीपुरि, नृप पितु मात शिवादेवी।
गर्भ बसे शुभ स्वप्न दिखाकर, तिथि कार्तिक शुक्ला षष्ठी।।
गर्भकल्याणक पूजा करते, मिले राह कल्याण की।।
इन्द्र सभी मिल भक्ती करते, तीर्थंकर भगवान की।।1।।

ॐ ह्रीं कार्तिकशुक्लाषष्ठ्यां श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकरगर्भकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आवो हम सब करें अर्चना, प्रभु के पंचकल्याण की।
इन्द्र सभी मिल भक्ती करते, तीर्थंकर भगवान की।।
वन्दे जिनवरम्-4।।

श्रावण शुक्ला छठ में मति श्रुत, अवधिज्ञानि प्रभु जन्मे थे।
मेरू पर जन्माभिषेक में, देव देवियाँ हर्षे थे।।
जन्मकल्याणक पूजा करते, मिले राह उत्थान की।।
इन्द्र सभी मिल भक्ती करते, तीर्थंकर भगवान की।।2।।

ॐ ह्रीं श्रावणशुक्लाषष्ठ्यां श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकरजन्मकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आवो हम सब करें अर्चना, प्रभु के पंचकल्याण की।
इन्द्र सभी मिल भक्ती करते, तीर्थंकर भगवान की।।
वन्दे जिनवरम्-4।।
चले ब्याहने राजुल को, पशु बंधे देख वैराग्य हुआ।
श्रावण सुदि छठ सहस्राम्र वन, में प्रभु दीक्षा स्वयं लिया।
दीक्षा तिथि जजते मिल जावे, बुद्धि आत्मकल्याण की।।
इन्द्र सभी मिल भक्ती करते, तीर्थंकर भगवान की।।3।।

ॐ ह्रीं श्रावणशुक्लाषष्ठ्यां श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकरदीक्षाकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आवो हम सब करें अर्चना, प्रभु के पंचकल्याण की।
इन्द्र सभी मिल भक्ती करते, तीर्थंकर भगवान की।।
वन्दे जिनवरम्-4।।
आश्विन सुदि एकम पूर्वाण्हे, ऊर्जयंत गिरि पर तिष्ठे।
केवलज्ञान सूर्य प्रगटा तब, प्रभु को बांसवृक्ष नीचे।।
समवसरण में किया सभी ने, पूजा केवलज्ञान की।।
इन्द्र सभी मिल भक्ती करते, तीर्थंकर भगवान की।।4।।

ॐ ह्रीं आश्विनशुक्लाप्रतिपदायां श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकरकेवलज्ञान-कल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आवो हम सब करें अर्चना, प्रभु के पंचकल्याण की।
इन्द्र सभी मिल भक्ती करते, तीर्थंकर भगवान की।।
वन्दे जिनवरम्-4।।
प्रभु गिरनार शैल से मुक्ती, रमा वरी शिवधाम गये।
सुदि आषाढ़ सप्तमी सुरगण, वंद्य नेमि जगपूज्य हुए।।
जो निर्वाण कल्याणक पूजें, मिले राह निर्वाण की।।
इन्द्र सभी मिल भक्ती करते, तीर्थंकर भगवान की।।5।।

ॐ ह्रीं आषाढ़शुक्लासप्तम्यां श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकरमोक्षकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

-पूर्णार्घ्य (दोहा) -

नेमिनाथ की वंदना, करे नियम को पूर्ण।
पूर्ण अर्घ्य अर्पण करत, होवें सब दुख चूर्ण।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीअरिष्टेनेमिनाथतीर्थंकरपंचकल्याणकाय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा, दिव्य पुष्पांजलिः।

अथ १०८ अर्घ्य

-दोहा-

नेमिनाथ भगवंत को, वंदूं शीश नमाय।
पुष्पांजलि से पूजते, भव भव दुःख नशायं।।1।।

अथ मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

-दोहा-

समीचीन गुण के निमित, अतिशय स्थूल महान्।
'स्थविष्ठ' प्रभु नेमि को, नमत बनूँ गुणवान्।।1।।

ॐ ह्रीं स्थविष्ठाय श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञानादिकगुण वृद्ध प्रभु, इससे 'स्थविर' आप।
दर्शन ज्ञान चरित्र हित, नमूँ नेमि नत माथ।।2।।

ॐ ह्रीं स्थविराय श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

त्रिभुवन में सुप्रशस्त हो, 'ज्येष्ठ' नेमि भगवान्।
आत्म सुधारस प्राप्त हो, नमते निज पर ज्ञान।।3।।

ॐ ह्रीं ज्येष्ठाय श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सब में अग्रेसर तुम्हीं, 'प्रष्ठ' नाम से ख्यात।
आत्मसुरभि फैले जगत, नमत आत्मसुख सात्।।4।।

ॐ ह्रीं प्रष्ठाय श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सब भव्यों को प्रिय अधिक, 'प्रेष्ठ' आप जगमीत।
गुण अनन्तयुत नेमिप्रभु, जजूं नमूँ धर प्रीत।।5।।

ॐ ह्रीं प्रेष्ठाय श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

केवलज्ञान सुबुद्धि तुम, अति विस्तीर्ण प्रसिद्ध।
प्रभु 'वरिष्ठधी' तुम नमूँ, गुणमणि धरूं समृद्ध।।6।।

ॐ ह्रीं वरिष्ठधिये श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लोक अग्र पर तिष्ठते, अतिशय स्थिर नित्य।
इसीलिये प्रभु स्थेष्ठ, नमत लहूँ सुख नित्य।।7।।

ॐ ह्रीं स्थेष्ठाय श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

त्रिभुवन के गुरु आप हैं, नाथ 'गरिष्ठ' प्रधान।
स्वात्मामृत के पान से, बनूँ स्वस्थ अमलान।।8।।

ॐ ह्रीं गरिष्ठाय श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गुणपेक्षा बहुरूप को, धारण करते नाथ।
प्रभु 'बंहिष्ठ' तुम्हें नमूँ, मिले सौख्य श्रीसाथ।।9।।

ॐ ह्रीं बंहिष्ठाय श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बहु प्रशंसनीया सुगुण, प्रभो 'श्रेष्ठ' तुम नाम।
अनुपम गुणनिधि हेतु मैं, नमूँ नेमि शिवधाम।।10।।

ॐ ह्रीं श्रेष्ठाय श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चर्मचक्षु से आप हैं, अतिशय सूक्ष्म जिनेश।
प्रभु 'अणिष्ठ' तुमको नमूँ, मिटे जगत् का क्लेश।।11।।

ॐ ह्रीं अणिष्ठाय श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जगत्पूज्य वाणी विमल, प्रभु 'गरिष्ठगी' नाम।
मम रसना हो रसवती, शत शत करूँ प्रणाम।।12।।

ॐ ह्रीं गरिष्ठगिरे श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चतुर्गती संसार को, नष्ट किया भगवान्।
नमूँ 'विश्वमुट्' नेमिप्रभु, पाऊँ सौख्य निधान।।13।।

ॐ ह्रीं विश्वमुचे श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

धर्मसृष्टि रचना किया, आप 'विश्वसृट्' मान्य।
धर्म संपदा पूर्ण हो, नमते सुख धन धान्य।।14।।

ॐ ह्रीं विश्वसृजे श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अखिल लोक के शीश हो, नेमि प्रभो! 'विश्वेट्'।
सप्तपरम स्थान हित, वंदूं मस्तक टेक।।15।।

ॐ ह्रीं विश्वेशे श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सब जग की रक्षा करो, अभयदान दे नाथ।
नाम 'विश्वभुक्' मैं नमूँ, पूजत बनूँ सनाथ।।16।।

ॐ ह्रीं विश्वभुजे श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ले जाते शुचिकर्म में, सब जीवों को नाथ।
नेमि! 'विश्वनायक' तुम्हीं, नमूँ नमाऊँ माथ।।17।।

ॐ ह्रीं विश्वनायकाय श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

केवलज्ञान सुरश्मि से, व्यापा लोकालोक।
'विश्वाशी' भगवान को, वंदूँ देऊँ धोक।।18।।

ॐ ह्रीं विश्वाशिषे श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'विश्वरूप आत्मा' तुम्हीं, सकल विश्व में आप।
व्याप्त लोकपूरण प्रथित, समुद्घात से नाथ।।19।।

ॐ ह्रीं विश्वरूपात्मने श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सर्व विश्व से पार हैं, आप 'विश्वजित्' नाम।
सकल गुणों की राशि हित, करूँ अनंत प्रणाम।।20।।

ॐ ह्रीं विश्वजिते श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'विजितान्तक' मृत्यूजयी, नेमि! नमूँ रुचि धार।
शक्ती दो प्रभु मोह यम, काम मल्ल दूं मार।।21।।

ॐ ह्रीं विजितान्तकाय श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नष्ट किया भव भ्रमण तुम, नाथ 'विभव' जग मान्य।
जन्ममरण दुख क्षय करो, तुम जग में प्राधान्य।।22।।

ॐ ह्रीं विभवाय श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सात भयों से दूर प्रभु, 'विभय' करो भय दूर।
सर्वकांति नित नेमि को, नमत मिले सुखपूर।।23।

ॐ ह्रीं विभयाय श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभु अनंत बलशालि तुम, 'वीर' नाम से ख्यात।
मेरी नंतचतुष्टयी, दीजे श्रुत विख्यात।।24।।

ॐ ह्रीं वीराय श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नाथ 'विशोक' त्रिलोक में, किया शोक को दूर।
मेरे शोक हरो सभी, नमूँ नेमि गुणपूर।।25।।

ॐ ह्रीं विशोकाय श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वृद्धावस्था से रहित, 'विजर' नाम से ख्यात।
जरा जीर्ण मेरी करो, मेटो भव भव त्रास।।26।।

ॐ ह्रीं विजराय श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नहीं जीर्ण होते कभी, 'अजरन्'[1] नाम धरंत।
सभी व्याधि दुख क्षीण हों, नमूँ नाथ शिवकांत।।27।।

ॐ ह्रीं अजरते श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

राग रहित हो देव तुम, अतः 'विराग' प्रसिद्ध।
नमूँ विरागी मैं बनूँ, पाऊँ निजगुण रिद्धि।।28।।

ॐ ह्रीं विरागाय श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सर्व पाप से 'विरत' हो, भवसुख विरत महान्।
मेरे महाव्रत पूरिये, नमूँ तपोधनवान।।29।।

ॐ ह्रीं विरताय श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सर्वपरिग्रह शून्य हो, नाथ! 'असंग' अनूप।
परिग्रह ग्रंथि से छुटूं पाऊँ निज चिद्रूप।।30।।

ॐ ह्रीं असंगाय श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सब विषयों से भिन्न हो, पूर्ण पवित्र 'विविक्त'।
मुझको भेदविज्ञान दो, होऊँ पर से रिक्त।।31।।

ॐ ह्रीं विविक्ताय श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मत्सर आदिक दोष से, रहित गुणों की राशि।
नमूँ 'वीतमत्सर' तुम्हें, पाऊँ निज सुखराशि।।32।।

ॐ ह्रीं वीतमत्सराय श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शिष्यों के बांधव सहज, हित उपदेशी सूर्य।
'विनेयजनताबंधु' को, नमूँ तमोहर सूर्य।।33।।

ॐ ह्रीं विनेयजनताबंधवे श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सब कल्मष से दूर हो, नमत पाप हो क्षीण।
'विलीन सर्व कल्मष' तुरत, करो सौख्य अक्षीण।।34।।

ॐ ह्रीं विलीनाशेषकल्मषाय श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मुक्तिरमा के साथ में, योग 'वियोग' महान।
इष्टवियोगादिक सभी, दुःख हरो भगवान।।35।।

ॐ ह्रीं वियोगाय श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आठ अंग लक्षण कहा, योग 'योगवित्' नाथ।
ध्यानयोग के हेतु मैं, नमूँ जोड़ द्वय हाथ।।36।।

ॐ ह्रीं योगविदे श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सब पदार्थ को जानते, आप श्रेष्ठ 'विद्वान'।
विद्याधन मुझको मिले, नमूँ नंत गुणवान्।।37।।

ॐ ह्रीं विदुषे श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

धर्म उभय सृष्टी किया, प्रभो 'विधाता' सिद्ध।
मुनीधर्म मुझको मिले, नमूँ करूँ यमविद्ध।।38।।

ॐ ह्रीं विधात्रे श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निरतिचार चारित्रधर, 'सुविधि' कहाए आप।
पंचम चारित हेतु मैं, नमूँ हरो भव ताप।।39।।

ॐ ह्रीं सुविधये श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तम ध्यानी थे तुम्हीं, 'सुधी' जगत में श्रेष्ठ।
धर्म शुक्ल की सिद्धि हो, नमूँ नमूँ प्रभु ज्येष्ठ।।40।।

ॐ ह्रीं सुधिये श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

क्षमारूप हो क्रोधरिपु, का करके संहार।
'क्षांतिभाक्' को नमत ही, बनूँ क्षमा भंडार।।41।।

ॐ ह्रीं क्षांतिभाजे श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'पृथिवीमूर्ति' स्वरूप हो, सर्वंसहा महेश।
सहनशीलता गुण मिले, नमूँ हरो भव क्लेश।।42।।

ॐ ह्रीं पृथिवीमूर्तये श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आत्यंतिक शांती सहित, 'शांतिभाक्' जिनराज।
परम शांति मुझको मिले, नमत पूर्ण हो काज।।43।।

ॐ ह्रीं शांतिभाजे श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जल सम शीलत स्वच्छ हो, किया कर्ममल दूर।
'सलिलात्मक' मन स्वच्छ कर, भरो ज्ञानसुख पूर।।44।।

ॐ ह्रीं सलिलात्मकाय श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सब जीवों के प्राणसम, 'वायुमूर्ति' भगवान।
मैं निसंग बन जाऊँ प्रभु, नमूँ नमूँ सुखदान।।45।।

ॐ ह्रीं वायुमूर्तये श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अंतर बाहर उपधि से, रहित अमूर्त असंग।
नमूँ 'असंगात्म' तुम्हें, रहूँ मुक्ति के संग।।46।।

ॐ ह्रीं असंगात्मने श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मकाष्ठ को भस्म कर, 'वह्निमूर्ति' श्रुतमान्य।
ध्यान अग्नि मुझको मिले, नमूँ आप गुरु मान्य।।47।।

ॐ ह्रीं वह्निमूर्तये श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हिंसा आदिक पाप सब, जला दिये प्रभु शीघ्र।
प्रभु 'अधर्मधक्' सिद्ध हो, नमूँ भक्ति है तीव्र।।48।।

ॐ ह्रीं अधर्मदहे श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मरूप सामग्रि को, होमा सम्यक् आप।
प्रभो! 'सुयज्वा' मैं नमूँ, मैं होमूं सब पाप।।49।।

ॐ ह्रीं सुयज्वने श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निज स्वभाव आराधते, 'यजमानात्मा' सिद्ध।
आराधूं निज तत्त्व मैं, पाऊँ नवनिधि रिद्धि।।50।।

ॐ ह्रीं यजमानात्मने श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–रेखता छंद–

प्रभो! स्वात्मासुखाम्बुधि में, किया अभिषेक नित उसमें।
अतः 'सुत्वा' कहाते हो, जजत ही सौख्य भरते हो।।51।।

ॐ ह्रीं सुत्वने श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभो! इन्द्रादि पूजित हो, अतः 'सूत्रामपूजित' हो।
जजत ही दृग्विशुद्धी हो, मुझे बोधी समाधी हो।।52।।

ॐ ह्रीं सूत्रामपूजिताय श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कुशल 'ऋत्विक्' तुम्हीं सच में, यज्ञ ज्ञानैक करने में।
स्व कर्मेंधन दहन कर दूं, प्रभो यह शक्ति दो वंदूँ।।53।।

ॐ ह्रीं ऋत्विजे श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तुम्हीं हो 'यज्ञपति' जग में, प्रमुख हो यज्ञ की विधि में।
जलाकर ध्यान अग्नी को, हवन कर लूँ नमत तुमको।।54।।

ॐ ह्रीं यज्ञपतये श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शतेन्द्रों ने किया पूजा, न तुम सम अन्य है दूजा।
इसी से 'याज्य' हो स्वामी, नमूँ मैं आप अभिरामी।।55।।

ॐ ह्रीं याज्याय श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हवन के अंग परधाना, अतः 'यज्ञांग' शिवधामा।
नमूँ मैं नित्य श्रद्धा से, तपोग्नी प्राप्त हो तुमसे।।56।।

ॐ ह्रीं यज्ञांगाय श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

न मरते आप 'अमृत' हैं, परम अमृत रसायन हैं।
प्रभो! तुमको नमन करके, विषय तृष्णा व दुःख भगते।।57।।

ॐ ह्रीं अमृताय श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निजात्मानंद में रत हो, अशुद्धी हवन करते हो।
नमूँ 'हवि' आपको रुचि से, सुखामृत प्राप्त हो तुमसे।।58।।

ॐ ह्रीं हविषे श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गगनवत् व्याप्त हो जग में, केवलज्ञान किरणों से।
इसी से 'व्योममूर्ती' हो, नमत सुज्ञान मुझमें हो।।59।।

ॐ ह्रीं व्योममूर्तये श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वर्ण रस गंध से रहिता, 'अमूर्तात्मा' ज्ञानसहिता।
अमूर्तिक मैं बनूँ स्वामी, तुम्हें पूजूँ जगन्नामी।।60।।

ॐ ह्रीं अमूर्तात्मने श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्म मल लेप से हीना, प्रभो! 'निर्लेप' गुणलीना।
बनूं निर्लेप मैं पर से, करूँ पूजा अतः रुचि से।।61।।

ॐ ह्रीं निर्लेपाय श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सभी रागादिमल शून्या, तुम्हीं 'निर्मल' बने पूर्णा।
आधि व्याधी सभी विनशें, नमत ही पूर्ण सुख विलसे।।62।।

ॐ ह्रीं निर्मलाय श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'अचल' हो सिद्ध सुस्थिर हो, लोक के अग्र अविचल हो।
अचल हो जाऊँ मैं निज में, यही फल प्राप्त कर लूँ मैं।।63।।

ॐ ह्रीं अचलाय श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चन्द्र सम शांति देते हो, परम आल्हाद भरते हो।
'सोममूर्ती' नमूँ तुमको, स्वात्म आल्हाद दो मुझको।।64।।

ॐ ह्रीं सोममूर्तये श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सौम्यरूपी 'सुसौम्यात्मा', सिद्धपद प्राप्त परमात्मा।
नमूँ मैं आत्म शुचि हेतू, साम्यगुण पूर्ण कर दीजे।।65।।

ॐ ह्रीं सुसौम्यात्मने श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सूर्यसम पूर्ण तेजस्वी, ज्ञान किरणों से ओजस्वी।
'सूर्यमूर्ती' नमूँ तुमको, स्वात्म का तेज दो मुझको।।66।।

ॐ ह्रीं सूर्यमूर्तये श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'महाप्रभ' केवली प्रभु हो, धर्म किरणों सहित तुम हो।
नमूँ मैं आपको शुचि हो, प्रगट कर लूं स्वात्म रवि को।।67।।

ॐ ह्रीं महाप्रभाय श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

महामंत्रों के ज्ञाता हो, 'मंत्रवित्' नाम पाते हो।
नमूँ मैं मुक्ति के हेतू, मंत्र मिल जाय भवसेतू।।68।।

ॐ ह्रीं मंत्रविदे श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मंत्र चारों हि अनुयोगा, उन्हीं के आप उपदेष्टा।
'मंत्रकृत्' आप को प्रणमूँ, ज्ञान वाराशि को पालूँ।।69।।

ॐ ह्रीं मंत्रकृते श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मंत्रमय मंत्ररूपी हो, प्रभो! 'मंत्री' मंत्रतनु हो।
हमें भी मंत्र दे दीजे, नमूँ मैं मुक्तिश्री दीजे।।70।।

ॐ ह्रीं मंत्रिणे श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'मंत्रमूर्ती' तुम्हीं भगवन्, मंत्र अक्षरमयी तुम तन।
नमूँ तुम नाम मंत्रों को, प्राप्त कर लूं स्वात्म पद को।।71।।

ॐ ह्रीं मंत्रमूर्तये श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'अनंतग' मोक्ष में राजें, ज्ञान से विश्व में व्यापें।
नमूँ मैं मोक्ष प्राप्ती हित, यही भक्ती फलेगी नित।।72।।

ॐ ह्रीं अनंतगाय श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्ण स्वातन्त्र्य हो करके, 'स्वतंत्रात्मा' तुम्हीं चमके।
नमूँ मैं स्वात्म संपति दो, सभी विपदा दूर कर दो।।73।।

ॐ ह्रीं स्वतंत्राय श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'तंत्रकृत्' शास्त्र के कर्ता, तुम्हीं प्रभु भावश्रुत कर्ता।
दिव्यध्वनि द्वादशांगी है, नमत ही स्वात्म निधिकर है।।74।।

ॐ ह्रीं तंत्रकृते श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुशोभन है निकट प्रभु का, अतः तुम 'स्वन्त' हो शिवदा।
नमूँ मैं दुख दरिद नाशूं, तुम्हें पा निज को परकाशूं।।75।।

ॐ ह्रीं स्वन्ताय श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मृत्यु का अंत कर दीना, 'कृतान्तान्त' नाम है लीना।
नमूँ मैं सर्व दुख भागें, मृत्यु भयभीत हो भागे।।76।।

ॐ ह्रीं कृतान्तान्ताय श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जैन सिद्धांत के कर्ता, सभी के क्षेम सुख भर्ता।
नमत 'कृतान्तकृत्' प्रभु को, जगत में सौख्य शांती हो।।77।।

ॐ ह्रीं कृतान्तकृते श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'कृती' हो पुण्य फल पायो, पुण्यराशी मुनी गायो।
नमूँ मैं पाप को नाशूं, पुण्य से स्वात्म को भासूं।।78।।

ॐ ह्रीं कृतिने श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चार पुरुषार्थ को कह के, 'कृतार्था' नाम पा करके।
आपने मोक्ष पद पाया, नमूँ मैं स्वस्थ हो काया।।79।।

ॐ ह्रीं कृतार्थाय श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभो! 'सत्कृत्य' हो जग में, सत्य कर्तव्यप्रद सच में।
प्रजा पोषण किया तुमने, नमूँ मैं स्वात्म रुचि मन में।।80।।

ॐ ह्रीं सत्कृत्याय श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

किया सब आत्म कार्यों को, प्रभो! 'कृतकृत्य' तुम ही हो।
बनूं कृतकृत्य प्रभु मैं भी, इसी से पूजहूँ नित ही।।81।।

ॐ ह्रीं कृतकृत्याय श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तपस्या यज्ञ कर करके, प्रभो! 'कृतक्रतू' ज्ञान धर के।
तपस्या पूर्ण कर पाऊँ, इसी से आपको ध्याऊँ।।82।।

ॐ ह्रीं कृतक्रतवे श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सदा अस्तित्व से स्थित हो, 'नित्य' प्रभु तीन जग में हो।
नमूँ निज आत्म गुण पाऊँ, स्वस्थ हो नित्य बन जाऊँ।।83।।

ॐ ह्रीं नित्याय श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभो! तुम मृत्यु को जीता, सु 'मृत्युंजय' कर्म जीता।
नमूँ मैं भक्ति धर नित ही, बनूं मृत्युंजयी झट ही।।84।।

ॐ ह्रीं मृत्युंजयाय श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नहीं है अन्त इस जग में, 'अमृत्यू' नाम श्रुत वर्णे।
मोक्ष पद प्राप्त है तुमको , नमूँ मैं कालजयि प्रभु को।।85।।

ॐ ह्रीं अमृत्यवे श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अमृत सम शांति पुष्टी कर, प्रभो! 'अमृतात्मा' जिनवर।
ज्ञान अमृत पिऊँ निश दिन, तुम्हें पूजूँ नमूँ प्रतिदिन।।86।।

ॐ ह्रीं अमृतात्मने श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मोक्ष में आप जन्में हो, प्रभो! 'अमृतोद्भव' तुम हो।
धर्म अमृत झराते हो, जजत समरस पिलाते हो।।87।।

ॐ ह्रीं अमृतोद्भवाय श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सदा शुद्धात्म में तन्मय, प्रभो! तुम 'ब्रह्मनिष्ठा' मय।
मुझे भी स्वात्मतन्मयता, मिले इस हेतु मैं जजता।।88।।

ॐ ह्रीं ब्रह्मनिष्ठाय श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'परंब्रह्मा' जगत्पति हो, निजात्मा रूप परिणत हो।
नमूँ निज ब्रह्मपद पाऊँ, जगत् के दुःख विनशाऊँ।।89।।

ॐ ह्रीं परंब्रह्मणे श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभो! कैवल्य ज्ञानादी, गुणों से पूर्ण वृद्धी की।
नमूँ 'ब्रह्मात्मा' नित ही, प्राप्त कर लूं स्वगुण नित ही।।90।।

ॐ ह्रीं ब्रह्मात्मने श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तुम्हीं तो 'ब्रह्मसंभव' हो, स्वात्म से आप उत्पन्न हो।
आत्म के ज्ञानचारित को, प्राप्त कर लूं नमन तुमको।।91।।

ॐ ह्रीं ब्रह्मसंभवाय श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'महाब्रह्मपती' तुम ही, सिद्ध परमेष्ठी नित ही।
नमः सिद्धेभ्यः कह करके, धरी दीक्षा नमूँ रुचि से।।92।।

ॐ ह्रीं महाब्रह्मपतये श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तुम्हीं तो मोक्ष के स्वामी, अतः 'ब्रह्मेट्' जगनामी।
स्वात्म सुख ज्ञान मुझको दो, नमूँ मैं ब्रह्मपद दे दो।।93।।

ॐ ह्रीं ब्रह्मेजे श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'महाब्रह्मापदेश्वर' हो, गणाधिप साधु वंदित हो।
समवसृति में विराजे हो, नमूँ प्रमुदितमना तुमको।।94।।

ॐ ह्रीं महाब्रह्मपदेश्वराय श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हास्यमुख 'सुप्रसन्ना' हो, स्वर्गमुक्ती प्रदाता हो।
दुःखशोकादि हरने को, नमूँ प्रमुदितमना तुमको।।95।।

ॐ ह्रीं सुप्रसन्नाय श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'सुप्रसन्नात्मा' स्वामी, स्वच्छ निर्मल गुण अभिरामी।
स्वच्छ शीतल मेरा मन हो, नमत ही स्वात्मसमरस हो।।96।।

ॐ ह्रीं सुप्रसन्नात्मने श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'ज्ञान अरु धर्म दम प्रभु' हो, दयालू इन्द्रियविजयी हो।
केवली धर्मदम स्वामी, नमूँ मैं धर्म पथगामी।।97।।

ॐ ह्रीं ज्ञानधर्मदमप्रभवे श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'प्रशमात्मा' तुम्हीं भगवन्, क्रोध रिपु का किया मर्दन।
शांति से कर्म को जीता, नमूँ मैं जगत् से भीता।।98।।

ॐ ह्रीं प्रशमात्मने श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'प्रशान्तात्मा' तुम्हीं तो हो, घातिकर्मारि विजयी हो।
नमूँ मैं शांति सुख पाऊँ, निजात्मा में ही रम जाऊँ।।99।।

ॐ ह्रीं प्रशान्तात्मने श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभो! 'पुराणपुरुषोत्तम', पुराने सब में हो उत्तम।
मुक्तिलक्ष्मीपती विष्णू, नमूँ मैं होऊँ भवजिष्णू।।100।।

ॐ ह्रीं पुराणपुरुषोत्तमाय श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–सोरठा–

'महाकारुणिक' आप, दया धर्म उपदेशिया।
नेमिनाथ प्रभु जाप, करत जन्म मृत्यू टले।।101।।

ॐ ह्रीं महाकारुणिकाय श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'मंता' आप महान, सब पदार्थ को जानते।
जजूँ नेमि भगवान, पूर्ण ज्ञान संपति मिले।।102।।

ॐ ह्रीं मंत्रे श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सर्व मंत्र के ईश, 'महामंत्र' तुम नाम है।
तुम्हें नमें गणधीश, नेमिनाथ तुमको जजूँ।।103।।

ॐ ह्रीं महामंत्राय श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

यतिगण में अतिश्रेष्ठ, नाम 'महायति' आपका।
पूजत ही पद श्रेष्ठ, नेमिनाथ तुम पूजहूँ।।104।।

ॐ ह्रीं महायतये श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'महानाद' प्रभु आप, दिव्यध्वनी गंभीर धर।
नमत बनूँ निष्पाप, नेमिनाथ मैं नित जजूँ।।105।।

ॐ ह्रीं महानादाय श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दिव्यध्वनी गंभीर, योजन तक सुनते सभी।
जजत मिले भवतीर, 'महाघोष' तुम नाम को।।106।।

ॐ ह्रीं महाघोषाय श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नाथ 'महेज्य' सुनाम, महती पूजा पावते।
सौ इन्द्रों से मान्य, नेमिनाथ मैं पूजहूँ।।107।।

ॐ ह्रीं महेज्याय श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'महसांपति' प्रभु आप, सर्व तेज के ईश हो।
नेमिनाथ भवताप, हरण करो मैं पूजहूँ।।108।।

ॐ ह्रीं महसांपतये श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–पूर्णार्घ्य–

नेमिनाथ को नियम से, जपूं भक्ति चितधार।
नित्य अर्घ्य से पूजते, होऊं भवदधि पार।।1।।

ॐ ह्रीं स्थविष्ठादि–अष्टोत्तरशतगुणसमन्विताय श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा, दिव्य पुष्पांजलिः।

सर्वाण्हयक्ष व कूष्मांडी यक्षी के अर्घ्य

–दोहा–

नेमिनाथ के पास 'सर्वाण्हयक्ष' निवसंत।
भक्तों को सुख शांति दे, हरे परस्पर द्वंद।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीअरिष्टनेमिनाथस्य शासनदेव सर्वाण्हयक्ष! अत्र आगच्छ आगच्छ, इदं जलादि अर्घ्यं गृहाण गृहाण स्वाहा।

'कूष्मांडिनी' यक्षिणी, नेमिनाथ पद भक्त।
रुचि से अर्घ चढ़ावते, नाशो सर्व अनिष्ट।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीअरिष्टनेमिनाथस्य शासनदेवि कूष्मांडिनीयक्षि! अत्र आगच्छ आगच्छ, इदं जलादि अर्घ्यं गृहाण गृहाण स्वाहा।

जाप्य– **ॐ ह्रीं श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय नमः।**

(सुगंधित पुष्पों से, लौंग से या पीले चावलों से 108 बार, 27 बार या 9 बार जाप्य करें।)

जयमाला

(तर्ज –चंदन सा बदन.....)

नेमी भगवन्! शत शत वंदन, शत शत वंदन तव चरणों में।
कर जोड़ खड़े, तव चरण पड़े, हम शीश झुकाते चरणों में।।टेक.।।

यौवन में राजमती को वरने, चले बरात सजा करके।
पशुओं को बांधे देख प्रभो! रथ मोड़ लिया उल्टे चल के।।
लौकांतिक सुर संस्तव करके, पुष्पांजलि की तव चरणों में।।नेमी.1।।

प्रभु नग्न दिगंबर मुनी बने, ध्यानामृत पी आनंद लिया।
कैवल्य सूर्य उगते धनपति ने, समवसरण भी अधर किया।।
तब राजमती आर्यिका बनी, चतुसंघ नमें तव चरणों में।।नेमी.।।2।।

वरदत्त आदि ग्यारह गणधर, अठरह हजार मुनिराज वहाँ।
राजीमति गणिनी आदिक, चालिस हजार संयतिकाएँ वहाँ।।
इक लाख सुश्रावक तीन लाख, श्राविका झुकीं तव चरणों में।।नेमी.।।3।।

सर्वाण्ह यक्ष अरु कूष्मांडिनि, यक्षी प्रभु शंख चिन्ह माना।
आयू इक सहस वर्ष चालिस, कर सहस देह उत्तम जाना।।
द्वादशगण से सब भव्य वहाँ, शत-शत वंदें तव चरणों में।।नेमी.।।4।।

प्रभु समवसरण में कमलासन पर, चतुरंगुल से अधर रहें।
चउ दिश में प्रभु का मुख दीखे, अतएव चतुर्मुख ब्रह्म कहें।।
सौ इन्द्र मिले पूजा करते, नित नमन करें तव चरणों में।।नेमी.।।5।।

प्रभु के विहार में चरण कमल, तल स्वर्ण कमल खिलते जाते।
बहुकोशों तक दुर्भिक्ष टले, षट् ऋतुज फूल फल खिल जाते।।
तनु नीलवर्ण सुंदर प्रभु को, सब वंदन करते चरणों में।।नेमी.।।6।।

तरुवर अशोक था शोकरहित, सिंहासन रत्न खचित सुंदर।
छत्रत्रय मुक्ताफल लंबित, भामंडल भवदर्शी मनहर।।
निज सात भवों को देख भव्य, प्रणमन करते तव चरणों में।। नेमी.।।7।।

सुरदुंदुभि बाजे बाज रहे, ढुरते हैं चौंसठ श्वेत चंवर।
सुरपुष्पवृष्टि नभ से बरसे, दिव्यध्वनि फैले योजन भर।।
श्रीकृष्ण तथा बलदेव आदि, अतिभक्ति लीन तव चरणों में।।नेमी.।।8।।

हे नेमिनाथ! तुम बाह्य और अभ्यंतर लक्ष्मी के पति हो।
दो मुझे अनंत चतुष्टयश्री, जो ज्ञानमती सिद्धिप्रिय हो।।
इसलिए अनंतों बार नमें, हम शीश झुकाते चरणों में।।नेमी.।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीअरिष्टनेमिनाथतीर्थंकराय जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

–शेर छंद –

जो भव्य नेमिनाथ का विधान यह करें।
संपूर्ण रोग शोक दुःख हानि वे करें।।
फिर मुक्तिरमा पाय के निजात्म सुख भरें।
'सज्ज्ञानमती' सूर्य से आलोक विस्तरें।।1।।

इत्याशीर्वादः।

प्रशस्ति

श्री शांति कुंथु अरनाथ प्रभू ने, जन्म लिया इस धरती पर।
यह हस्तिनागपुरि इंद्रवंद्य, रत्नों की वृष्टि हुई यहाँ पर।।
यहाँ जंबूद्वीप बना सुंदर, जिनमंदिर हैं अनेक सुखप्रद।
मेरा यहाँ वर्षायोग काल, स्वाध्याय ध्यान से है सार्थक।।1।।

श्री नेमिनाथ का यह विधान, रचना तीर्थंकर भक्तीवश।
यह रोग शोक दारिद्र्य, दुःख संकट हरने वाला संतत।।
वीराब्द पचीस सौ उनतालिस, आश्विन शुक्ला प्रतिपद् तिथि में।
यह विधान रचना की मैंने, होवे मंगलकर सब जग में।।2।।

इस युग के चारित्र चक्री श्री, आचार्य शांतिसागर गुरुवर।
बीसवीं सदी के प्रथमसूरि, इन पट्टाचार्य वीरसागर।।
ये दीक्षा गुरुवर मेरे हैं, मुझ नाम रखा था 'ज्ञानमती'।
इनके प्रसाद से ग्रंथों की, रचना कर हुई अन्वर्थमती।।3।।

श्री नेमिनाथ निर्वाणभूमि, गिरनार क्षेत्र पर टोंक बनें।
पाँचवी टोंक पर नेमिनाथ के, चरण इंद्र कृत हैं माने।।
सुरपति ने प्रभु के चरण वहाँ, उत्कीर्ण किये थे भक्ती से।
यह कथन आज भी है प्रसिद्ध, ग्रंथों में लिखा आचार्यों ने ।।4।।

उन चरणों की पूजा-भक्ती, जिनधर्मी नितप्रति किया करें।
नेमीप्रभु शासन यक्ष-यक्षिणी, नित प्रति रक्षा किया करें।।
जब तक निर्वाणभूमि गिरनार, क्षेत्र जग में जिनतीर्थ रहे।
तब तक यह गणिनी ज्ञानमती, कृति श्री विधान जयशील रहे।।5।।

पूजा नं. ३

भगवान नेमिनाथ जन्मभूमि शौरीपुर तीर्थ पूजा

–प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चंदनामती

स्थापना (शंभु छंद)

तीर्थंकर प्रभु श्री नेमिनाथ का, शौरीपुर में जन्म हुआ।
माँ शिवादेवि अरु पिता समुद्रविजय का शासन धन्य हुआ।।
उस जन्मभूमि शौरीपुर की, पूजन हेतू आह्वानन है।
सन्निधीकरण विधि के द्वारा, मैं करूँ तीर्थ स्थापन है।।1।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकरश्रीनेमिनाथजन्मभूमिशौरीपुरतीर्थक्षेत्र! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं तीर्थंकरश्रीनेमिनाथजन्मभूमिशौरीपुरतीर्थक्षेत्र! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं तीर्थंकरश्रीनेमिनाथजन्मभूमिशौरीपुरतीर्थक्षेत्र! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं स्थापनं।

अष्टक

तर्ज-तीरथ करने चली सती.....

पूजन करने चलो सभी, शौरीपुर में नेमीश्वर की।
जन्मभूमि से सार्थ जहाँ, जन्में बाइसवें जिनवर जी।।टेक0।।
नीर पिया भव भव में मैंने, प्यास न लेकिन बुझ पाई।
प्रभु पद में जलधारा देने, हेतु तभी स्मृति आई।।
स्वर्ण कलश में जल लेकर, पूजा कर लूँ तीर्थेश्वर की।
जन्मभूमि के साथ वहाँ, जन्मे बाइसवें जिनवर की।।1।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकरश्रीनेमिनाथजन्मभूमिशौरीपुरतीर्थक्षेत्राय जन्मजरा-मृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

पूजन करने चलो सभी, शौरीपुर में नेमीश्वर की।
जन्मभूमि से सार्थ जहाँ, जन्मे बाइसवें जिनवर जी।। टेक0।।
चन्दन एवं चन्द्रकिरण, तन को शीतल कर सकते हैं।
मन को शीतल करने में, नहिं वे सक्षम हो सकते हैं।।

सुरभित चंदन घिस कर अब, पूजन कर लूँ तीर्थेश्वर की।
जन्मभूमि से सार्थ जहाँ, जन्मे बाइसवें जिनवर जी।।2।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकरश्रीनेमिनाथजन्मभूमिशौरीपुरतीर्थक्षेत्राय संसारताप-विनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

पूजन करने चलो सभी, शौरीपुर में नेमीश्वर की।
जन्मभूमि से सार्थ जहाँ, जन्मे बाइसवें जिनवर जी।।टेक0।।
आतम सुख का स्वाद चखा नहिं, इसीलिए दुख पाया है।
खंडित सुख को समझ अखंडित, उसमें ही भरमाया है।।
अक्षयपद हित अक्षत ले, पूजन कर लूँ तीर्थेश्वर की।
जन्मभूमि से सार्थ जहाँ, जन्मे बाइसवें जिनवर जी।।3।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकरश्रीनेमिनाथजन्मभूमिशौरीपुरतीर्थक्षेत्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

पूजन करने चलो सभी, शौरीपुर में नेमीश्वर की।
जन्मभूमि से सार्थ जहाँ, जन्मे बाइसवें जिनवर जी।।टेक0।।
हे प्रभु! कामदेव ने सारे, जग को अपने वश में किया।
इससे बचने हेतु सुगंधित, पुष्प चरण में अर्प दिया।।
निज सौरभ हित पुष्प को ले, पूजन कर लूँ तीर्थेश्वर की।
जन्मभूमि से सार्थ जहाँ, जन्मे बाइसवें जिनवर जी।।4।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकरश्रीनेमिनाथजन्मभूमिशौरीपुरतीर्थक्षेत्राय कामबाण-विनाशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

पूजन करने चलो सभी, शौरीपुर में नेमीश्वर की।
जन्मभूमि से सार्थ जहाँ, जन्मे बाइसवें जिनवर जी।।टेक0।।
सभी तरह के पकवानों से, भूख मिटानी चाही है।
लेकिन कुछ पल भूख मिटी, नहिं शाश्वत तृप्ती पाई है।।
अब नैवेद्य थाल लेकर, पूजन कर लूँ तीर्थेश्वर की।
जन्मभूमि से सार्थ जहाँ, जन्मे बाइसवें जिनवर जी।।5।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकरश्रीनेमिनाथजन्मभूमिशौरीपुरतीर्थक्षेत्राय क्षुधारोग-विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूजन करने चलो सभी, शौरीपुर में नेमीश्वर की।
जन्मभूमि से सार्थ जहाँ, जन्मे बाइसवें जिनवर जी।।टेक0।।
अज्ञान तिमिर के कारण आतम, में अंधियारा छाया है।
इसीलिए प्रभु सम्मुख आकर, घृत का दीप जलाया है।।
आरति थाल सजाकर मैं, पूजन कर लूँ तीर्थेश्वर की।
जन्मभूमि से सार्थ जहाँ, जन्मे बाइसवें जिनवर जी।।6।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकरश्रीनेमिनाथजन्मभूमिशौरीपुरतीर्थक्षेत्राय मोहांधकार-विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

पूजन करने चलो सभी, शौरीपुर में नेमीश्वर की।
जन्मभूमि से सार्थ जहाँ, जन्मे बाइसवें जिनवर जी।।टेक0।।
कर्म मुझे दुख देते हैं, तुम तो प्रभु कर्मरहित स्वामी।
अशुभ कर्म हों भस्म मेरे, इसलिए शरण आया स्वामी।।
अग्निपात्र में धूप जला, पूजन कर लूँ तीर्थेश्वर की।
जन्मभूमि से सार्थ जहाँ, जन्मे बाइसवें जिनवर जी।।7।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकरश्रीनेमिनाथजन्मभूमिशौरीपुरतीर्थक्षेत्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

पूजन करने चलो सभी, शौरीपुर में नेमीश्वर की।
जन्मभूमि से सार्थ जहाँ, जन्मे बाइसवें जिनवर जी।।टेक0।।
बहुत तरह के फल खाकर, रसना तृप्त न हो पाई।
इसीलिए ताजे फल लेकर, प्रभु अर्चन की मति आई।।
शिवफल हित कुछ फल लेकर, पूजन कर लूँ तीर्थेश्वर की।
जन्मभूमि से सार्थ जहाँ, जन्मे बाइसवें जिनवर जी।।8।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकरश्रीनेमिनाथजन्मभूमिशौरीपुरतीर्थक्षेत्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

पूजन करने चलो सभी, शौरीपुर में नेमीश्वर की।
जन्मभूमि से सार्थ जहाँ, जन्मे बाइसवें जिनवर जी।।टेक0।।
जल गंधाक्षत आदि अष्ट, द्रव्यों का थाल सजाया है।
निज अनर्घ्य पद प्राप्त करूँ, यह भाव हृदय में आया है।।

रत्नत्रय हित अर्घ्य चढ़ा, पूजन कर लूं तीर्थेश्वर की।
जन्मभूमि से सार्थ जहाँ, जन्मे बाइसवें जिनवर जी।।9।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकरश्रीनेमिनाथजन्मभूमिशौरीपुरतीर्थक्षेत्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शेर छन्द

गंगा नदी के नीर से कलशे को भर लिया।
प्रभु नेमि जन्मभूमि पे जलधार कर दिया।।
राजा प्रजा व राष्ट्र भर में शांति कीजिए।
मेरी भी आतमा में नाथ! शांति दीजिए।।10।।

शांतये शांतिधारा

शौरीपुरी उद्यान में जो फूल खिले हैं।
वहाँ नेमिनाथ जन्म के उल्लेख मिले हैं।।
उन पुष्पों से प्रभु पाद में पुष्पांजली करूँ।
निज आत्मसंपदा को पा दुख शोक सब हरूँ।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः

शौरीपुर तीर्थ के अर्घ्य (दोहा)

कार्तिक सुदी छठ को जहाँ, हुई रतन की वृष्टि।
शौरीपुर की वह धरा, गर्भागम सुपवित्र।।1।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकरश्रीनेमिनाथगर्भकल्याणकपवित्रशौरीपुरतीर्थक्षेत्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रावण सुदि छठ नेमिप्रभु, जन्मे ले त्रय ज्ञान।
शौरीपुर वह जन्मभू, जजूँ मिले शिवथान।।2।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकरश्रीनेमिनाथजन्मकल्याणकपवित्रशौरीपुरतीर्थक्षेत्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रावण सुदि छठ को हुआ, नेमिनाथ वैराग।
ब्याह न कर वन चल दिये, कर राजुल का त्याग।।3।।

ॐ ह्रीं ऊर्जयन्तपर्वतस्य सहसाम्रवने दीक्षाकल्याणकप्राप्तश्रीनेमिनाथ-तीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ऊर्जयन्त गिरि पर हुआ, प्रभु को केवलज्ञान।
आश्विन सुदि एकम तिथी, जजूं नेमि भगवान।।4।।

ॐ ह्रीं ऊर्जयन्तपर्वतस्योपरिकेवलज्ञानकल्याणकप्राप्तश्रीनेमिनाथ-तीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य (दोहा)

गर्भ जन्म कल्याण से, स्थल जो सु पवित्र।
पूजूँ मैं पूर्णार्घ्य ले, शौरीपुर को नित्य।।1।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकरश्रीनेमिनाथगर्भजन्मकल्याणकपवित्रशौरीपुर-तीर्थक्षेत्राय पूर्णार्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा, दिव्य पुष्पांजलिः।

*जाप्य मंत्र-*ॐ ह्रीं शौरीपुरजन्मभूमिपवित्रीकृत-श्रीनेमिनाथतीर्थंकराय नमः।

जयमाला

तर्ज-हे वीर! तुम्हारे द्वारे पर.....

हे नेमिनाथ! तुम जन्मभूमि की, गुणगाथा गाएं कैसे।
शौरीपुर अतिशय पुण्यभूमि की, महिमा बतलाएं कैसे।।1।।

शब्दों की संख्या में कैसे, अगणित गुण बांधे जा सकते।
इन रूक्ष शब्द कण के द्वारा, भक्ति को दरशाएं कैसे।।2।।

जैसे दीपक से सूर्यदेव की, अर्चा लोक में होती है।
वैसे ही अल्पमती द्वारा, प्रभु गुणगाथा गाएं कैसे।।3।।

जैसे नदी का जल नदि में ही, अर्पण करते देखा मैंने।
वैसे ही अल्पशक्ति द्वारा, प्रभु जयमाला गाएं कैसे।।4।।

जैसे फूलों से वृक्षों की, पूजा करते हैं मूढ़मती।
वैसे ही तुच्छ भक्ति पुष्पों से, गुणमाला गाएं कैसे।।5।।

शौरीपुर राजा समुद्रविजय, श्री शिवादेवि संग रहते थे।
कर रहे देव जिनकी पूजा, उन महिमा बतलाएं कैसे।।6।।

इन सुत तीर्थंकर नेमी की, बारात चली जूनागढ़ को।
पशुबंधन लख वैराग्य हुआ, उस क्षण को बतलाएं कैसे।।7।।

राजुल ने भी नहिं ब्याह किया, पति का पथ अपनाया उसने।
दीक्षा लेकर आर्यिका बनी, उसका तप बतलाएं कैसे।।8।।

प्रभु नेमिनाथ ने ऊर्जयन्त, गिरि से मुक्ती पद प्राप्त किया।
निर्वाणथान वह पूज्य हुआ, उसकी महिमा गाएं कैसे।।9।।

इन बालयती तीर्थंकर का, जन्मस्थल शौरीपुर माना।
जहाँ अद्यावधि है जिनमंदिर, उसका यश बतलाएं कैसे।।10।।
इक मंदिर और बटेश्वर में, जहाँ यात्री नित्य ठहरते हैं।
अतिशयकारी प्रतिमाओं का, हम अतिशय बतलाएं कैसे।।11।।

उस जन्मभूमि शौरीपुर को, पूर्णार्घ्य समर्पण है मेरा।
''चन्दनामती'' है चाह यही, रत्नत्रय को पाएं कैसे।।12।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकरश्रीनेमिनाथजन्मभूमिशौरीपुरतीर्थक्षेत्राय जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शान्तये शांतिधारा, दिव्य पुष्पांजलिः।

गीता छन्द

जो भव्य प्राणी जिनवरों की, जन्मभूमि को नमें।
तीर्थंकरों की चरणरज से, शीश उन पावन बनें।।
कर पुण्य का अर्जन कभी तो, जन्म ऐसा पाएंगे।
तीर्थंकरों की श्रृँखला में, ''चन्दना'' वे आएंगे।।

इत्याशीर्वादः।

श्री नेमिनाथ भगवान की आरती

–प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चंदनामती

तर्ज –लेके पहला-पहला प्यार.....।

जय जय नेमिनाथ भगवान, हम करते तेरा गुणगान,
तेरी आरति से मिटता है तिमिर अज्ञान।।
करते प्रभु जग का कल्याण, तुमने पाया पद निर्वाण।
तेरी आरति से मिटता है तिमिर अज्ञान।।टेक.।।

राजुल को त्यागा प्रभु जी ब्याह न रचाया।
गिरनार गिरि पर जाकर योग लगाया।
प्राप्त हुआ फिर केवलज्ञान, दूर हुआ सारा अज्ञान,
तेरी आरति से मिटता है तिमिर अज्ञान।।1।।

शिवा देवी माता तुमसे धन्य हुई थी।
शौरीपुरी की जनता पुलकित हुई थी।
समुद्रविजय की कीर्ति महान, गाई सुर इन्द्रों ने आन,
तेरी आरति से मिटता है तिमिर अज्ञान।।2।।

सांझ सवेरे प्रभु की आरति उतारूँ।
तेरे गुण गाके निज के गुणों को भी पा लूँ।।
करे 'चंदनामति' गुणगान, होवे मेरा भी कल्याण,
तेरी आरति से मिटता है तिमिर अज्ञान।।3।।

शौरीपुर तीर्थ की आरती

–प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चंदनामती

तर्ज–मनिहारों का रूप.....

जन्मभूमि की गुणगाथा गाएं।
दीप घृतमय सजा करके लाए।।टेक.।।

नेमिनाथ प्रभू की जनमभूमि है।
यमुना तट पर बसा शौरीपुर तीर्थ है।।
भक्ति शब्दों से हम दर्शाएं, दीप घृतमय सजा करके लाए।।1।।

शौरीपुर के थे राजा समुद्रविजय।
शिवादेवी के संग, रहते महलों में वे।।
वही इतिहास सबको बताएं, दीप घृतमय सजा करके लाए।।2।।

पन्द्रह महीने महल में थे बरसे रतन।
दो-दो कल्याणकों से वो पावन नगर।।
उसी तीरथ की महिमा को गाएं, दीप घृतमय सजा करके लाए।।3।।

नेमी जी ब्याह को जब चले जूनागढ़।
पशुबंधन को लख चले दीक्षा को वन।।
बालयति प्रभु के पद सिर नमाएँ, दीप घृतमय सजा करके लाए।।4।।

सति राजुल ने भी, पति के ही पथ पे चल।
घोर तप को किया, आर्यिका गणिनी बन।।
रत्नत्रय प्राप्ति के हेतु ध्याएं, दीप घृतमय सजा करके लाए।।5।।

कई मुनियों ने निर्वाण पद पाया है।
सिद्धभूमि भी यह, तीर्थ कहलाया है।।
''चंदनामती'' वो पद हम भी पाएं, दीप घृतमय सजा करके लाए।।6।।

भजन

–प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चंदनामती

तर्ज–हम लाए हैं तूफान से.....

हम आए हैं निगोद से, आशाएँ संजोके।
मानुष जनम को पाके, फिर निगोद न लौटें।। टेक.।।

केवल जनम मरण में ही, पर्याय बिताई।
कुछ पुण्य का संयोग, त्रस पर्याय अब पाई।।
शक्ती मिले चिन्तन करें, आतम मगन होके।
मानुष जनम को पाके, फिर निगोद न लौटें।।1।।

स्वर्गों के सुख भोगे, पशू की योनि भी पाई।
नरकों में रो-रोकर, वहाँ की आयु बिताई।।
नर तन प्रभो सार्थक करूँ, अब शांत मन होके।
मानुष जनम को पाके, फिर निगोद न लौटें।।2।।

सम्यक्त्व की महिमा से, आतम शुद्ध बनाऊँ।
शुभ देव शास्त्र गुरु के प्रति कर्त्तव्य निभाऊँ।।
फिर 'चंदनामति' क्रम से स्वर्ग मोक्ष भी होते।
मानुष जनम को पाके फिर निगोद न लौटें।।3।।

भजन

–प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चंदनामती

तर्ज–मेरे देश की धरती.....

मेरे देश की धरती ज्ञानमती माता से धन्य हुई है
मेरे देश की धरती..... ।। टेक.।।
यह कृषि प्रधान है देश यहाँ, ऋषियों की तपस्या चलती है। ऋषियों.....
यहां संस्कारों के उपवन में, मानवता छिप-छिप पलती है।। मानवता.....
जहां सत्य, अहिंसा पालन की, पावनता मान्य हुई है,
मेरे देश की धरती.....।।1।।
जब तीर्थ अयोध्या की वसुधा, सुख शान्ति अमन थी चाह रही। सुख.....
तब ज्ञानमती माँ को पाकर, जनता को खुशी अपार हुई।। जनता.....
प्रभु आदिनाथ के महामहोत्सव, से वह धन्य हुई है,
मेरे देश की धरती.....।।2।।
हस्तिनापुरी में जम्बूद्वीप, रचना तुमने साकार किया है । रचना.....
इन्दिराजी को आशीर्वाद दे, ज्योति प्रवर्तन करा दिया। हां ज्योति.....
उसके स्वागत में हर प्रदेश की, जनता धन्य हुई है,
मेरे देश की धरती.....।।3।।
साहित्य रचा शिष्यों को बना, चेतन निर्माण किया तुमने। चेतन.....
''चन्दनामती'' तुम कृतियों की, यशसुरभी फैल रही जग में।। यश.....
युग-युग तक अमर रहेगी तू, ब्राह्मी माँ सदृश हुई है,
मेरे देश की धरती.....।।4।।

भजन

–प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चंदनामती

तर्ज-महाकुंभ का पर्व महान.....

जिनमंदिर का निर्माण, करो सब मिलके करो।
करो सब मिलके करो, करो सब मिलके करो...,
इससे मिलता है पुण्य महान, करो सब मिल के करो।।टेक.।।

मंदिर में राजें जिनवर प्रतिमा, तीर्थंकर चौबीसों की महिमा।
चौबीसों प्रभू का गुणगान, करो सब मिलके करो।।जिन.।।1।।

मंदिर में बजते हैं घंटे झालर, जिनवर पे ढुरते हैं चौंसठ चामर।
प्रभु आरती का पुण्य महान, करो सब मिलके करो।।जिन.।।2।।

मंदिर व प्रतिमा निर्माण जैसा, दूजा न कोई है पुण्य वैसा।
धन बढ़ता है करने से दान, करो सब मिलके करो।।जिन.।।3।।

मंदिर में सोने की ईंट लगाओ, सोना ही सोना जीवन में पाओ।
अपनी आत्मा को स्वर्ण समान, करो सब मिलके करो।।जिन.।।4।।

मंदिर के दर्शन की कर लो प्रतिज्ञा, ''चन्दनामती'' आज लेना ये शिक्षा।
सम्यग्दर्शन से आत्मा महान, करो सब मिलके करो।।जिन.।।5।।